तीन साथी

रविवार : आखिरी बात : लैबोरेटरी

तीन आख्यान

•

अनुवादक

धन्यकुमार जैन

•

रवीन्द्र-साहित्य-मन्दिर

पी-१५, कलाकार स्ट्रीट

कलकत्ता-७

रविवार

मेरी इस कहानीका प्रधान नायक है प्राचीन ब्राह्मण-पण्डित-वंशका एक लड़का। धन-सम्पत्तिके मामलेमें बाप हैं अपने वकालती-व्यवसायमें गुठली तक पके-हुए, और धर्म-कर्ममें हैं शाक्त-आचारके तीव्र जारक-रसमें जारित। अब अदालतमें प्रैक्टिस नहीं करनी पड़ती। एक तरफ पूजा-पाठ और दूसरी तरफ घर-बैठे कानूनी परामर्श देना, इन दोनोंको आस-पास रखकर वे इहलोक और परलोकका जोड़ मिलाकर बड़ी सावधानीसे चलते हैं। किसी भी ओर जरा भी पैर फिसलनेका काम नहीं।

ऐसे ठोस आचार-विचारसे-बँधे सनातनी घरकी दरार फोड़कर सहसा यदि काँटोंवाला नास्तिक-पौधा निकल आये, तो उसका भीत-दीवार-तोड़ मन जबरदस्त धक्के मारता रहता है ईंट-काठकी प्राचीन चुनाईपर। इस आचार-निष्ठ वैदिक ब्राह्मण-वंशमें दुर्दम्य 'काला पहाड़'का अभ्युदय हुआ हमारे नायकके रूपमें।

उसका असल नाम है अभयाचरण। इस नाममें कुल-धर्मकी जो छाप थी उसे उसने घिसकर साफ कर दिया है। अपना नाम बदलकर कर दिया अभीककुमार। इसके सिवा, वह जानता है कि प्रचलित नमूनेका आदमी वह नहीं है। उसका नाम भीड़के नामोंके साथ हाट-बाजारकी घिच-पिचमें पसीने-पसीने हो जाय, यह बात उसकी रुचिमें खटकती है।

अभीकका चेहरा आश्चर्य-रूपसे विलायती ढाँचेका है। गठा-हुआ लम्बा गोरा शरीर है, आँखें कंजी, नाक तीक्ष्ण, और ठोड़ी ऐसी कि मानो किसी प्रतिपक्षके विरुद्ध प्रतिवाद कर रही हो। और उसका मुष्टि-योग था अमोघ, सहपाठियोंमेंसे जो कदाचित् उसका पाणि-पीड़न सह चुके थे वे उसे सौ-हाथ दूरसे ही वर्जनीय समझते थे।

लड़केकी नास्तिकताके लिए बाप अम्बिकाचरण विशेष उद्विग्न नहीं थे। उनके लिए जबरदस्त एक नजीर थे प्रसन्नचन्द्र न्यायरत्न, खुद उनके ताऊ।

वृद्ध न्यायरत्नजी तर्कशास्त्रके गोलन्दाज हैं, चतुष्पाठीमें बैठे वे अनुस्वार-विसर्ग-वाले गोले दागा करते हैं ईश्वरके अस्तित्ववादपर। हिन्दू-समाज हँसके कहता रहता, 'गोले हजम !' कोई दाग ही नहीं पड़ता समाजकी पक्की प्राचीरपर। आचार-धर्मके पिंजड़ेको घरके दालानमें लटकाकर धर्म-विश्वासकी चिड़ियाको शून्य-आकाशमें उड़ा देनेसे साम्प्रदायिक अशान्ति नहीं होती। किन्तु अभीक वात-वातमें लोकाचारको टूटे सूपमें विठाकर चालान करता रहता था घूरेके ढेरमें। घरके चारों तरफ कुक्कुट-दम्पतियोंका अप्रतिहत सचरण सर्वदा ही मुखरध्वनिसे प्रमाणित करता रहता था उनपर घरके बड़े-वावूका आभ्यन्तरिक आकर्षण। इस तरहके म्लेच्छाचारकी शिकायतें क्षण-क्षणमें पहुँचती रहती थीं वापके कानों तक, किन्तु वे उन्हें सुनी-अनसुनी कर देते थे ; यहाँ तक कि वन्धुभावसे जो व्यक्ति उन्हें ऐसी खवर देने आता, गर्जनके साथ शीघ्र ही उसे ड्योढ़ीकी तरफ निकलनेका मार्ग वता दिया जाता। अपराध अत्यन्त प्रत्यक्ष न हो तो समाज अपनी गरजसे उससे वचकर निकल जाता है। किन्तु अन्तमें अभीक एकवार इतनी ज्यादती कर वैठा कि उसका अपराध अस्वीकार करना असम्भव हो गया। भद्रकाली इन लोगोंकी गृहदेवी हैं, उनकी ख्याति थी 'जाग्रत देवी'के रूपमें। अभीकका सतीर्थ वेचारा भजू वहुत डरता था उस देवीकी अप्रसन्नतासे। इससे असहिष्णु होकर उसकी भक्तिको अश्रद्धेय प्रमाणित करनेके लिए अभीकने देवीके वेदी-गृहमें ऐसा-कुछ अनाचार कर डाला कि वापको आग-ववूला होकर कहना पड़ा, "निकल जा मेरे घरसे, मैं तेरा मुँह नहीं देखना चाहता।" इतनी प्रवल क्षिप्रवेगकी कठोरता नियमनिष्ठ ब्राह्मण-पण्डित-वंशके चरित्रमें ही सम्भव है।

लड़केने माँसे जाकर कहा, "मा, देवीको मैं तो वहुत दिनोंसे छोड़ चुका हूँ, ऐसी दशामें देवीका मुझे छोड़ना वाहुल्य मात्र है। किन्तु, मैं जानता हूँ कि खिड़कीके रास्ते हाथ वढ़ानेसे तुम्हारा प्रसाद मिलेगा ही। वहाँ किसी देवीकी देवताई नहीं चलेगी, चाहे वे कितनी ही बड़ी 'जाग्रत देवी' क्यों न हों।"

माने अपनी आँखें पोंछते हुए, आँचलसे खोलकर, उसे एक नोट देना

चाहा। उसने कहा, "इस नोटकी जब मुझे बहुत ज्यादा जरूरत नहीं रहेगी तभी इसे लूँगा मैं तुम्हारे हाथसे। अलक्ष्मीके साथ कारबार करनेमें जोर लगता है, बैङ्क-नोट हाथमें लेकर ताल नहीं ठोंका जा सकता।"

अभीकके सम्बन्धमें और भी दो-एक बात कहनी पड़ेगी। जीवनमें उसके दो उलटी-जातके शौक थे, एक कल-कारखानेका जोड़ना-तोड़ना और दूसरा चित्र बनाना। उसके बापके थीं तीन-तीन मोटरगाड़ियाँ, उनकी मुफस्सिल-यात्राकी वाहिकाएँ। यन्त्र-विद्यामें उसका श्रीगणेश उन्हींको लेकर हुआ था। इसके सिवा बापके एक मुवक्किलके था मोटरका कारखाना, उसने वहाँ शौकसे बेगार की है बहुत दिनों तक।

अभीक चित्रकला सीखने गया था सरकारी आर्ट-स्कूलमें। कुछ ही दिनोंमें उसे दृढ़ विश्वास हो गया कि और-अधिक दिन सीखनेसे उसके हाथ हो जायेंगे मशीनके-बने और मगज हो जायेगा साँचेमें-ढला। वह कलाकार है, इस बातका प्रचार करने लगा अपने बुलन्द गलेसे। उसने प्रदर्शनी खोली, और सामयिक पत्रोंके विज्ञापनमें उसका परिचय निकला "भारतका सर्वश्रेष्ठ कलाकार अभीककुमार, बंगाली टीशियन!" वह जितना ही कहने लगा कि 'मैं आर्टिस्ट हूँ', उतनी ही उसकी प्रतिध्वनि गूँजने लगी एक गुटके मनकी पोली गुफामें; और वे अभिभूत हो गये। शिष्य और उससे भी अधिक संख्यामें शिष्याएँ जमने लगीं उसकी परिमण्डलीमें। उनलोगोंने विरोधी दलको आख्या दी 'फिलिस्टाइन'। कहने लगे, 'बुर्जुआ हैं।'

अन्तमें दुर्दिनोंके समय अभीकने आविष्कार किया कि उसका धन पिताके मंजूषा-केन्द्रमेंसे निकलकर 'कलाकार'के नामपर जो रजतच्छटा विच्छुरित किया करता था उसीकी दीप्तिमें थी उसकी ख्यातिकी अधिकांश उज्ज्वलता। साथ-साथ उसने और भी एक तत्त्व आविष्कार किया था कि 'अर्थ-भाग्यकी प्रवंचनाको लेकर आधुनिक लड़कियोंकी निष्ठामें कोई खास फर्क नहीं आया।' उपासिकाओंने अन्त तक आँखें फाड़-फाड़कर उच्च-मधुर कंठसे उसे कहा है 'आर्टिस्ट'। और, केवल आपसमें एक-दूसरेपर सन्देह किया है कि स्वयं

उनमेंसे दो-एकको छोड़कर बाकी सभी आर्टका कुछ समझती-बूझती नहीं, पाखण्ड करती हैं,–देखके जी जल जाता है।

अभीकके जीवनमें इसके बादका इतिहास लम्बा और अस्पष्ट है। मैली टोपी और तेल-स्याही-लगी नीले रंगकी कमीज-पतलून पहनकर बर्न-कम्पनीके कारखानेमें उसने पहले मिस्तरीगीरी और बादमें हेड-मिस्तरीगीरीका काम तक चला दिया है। मुसलमान खलासियोंमें शामिल होकर उसने चार पैसेके परांठे और उससे भी कम दामका शास्त्र-निषिद्ध पशु-मांस खाकर दिन विताये हैं बहुत सस्तेमें। लोगोंने कहा है, 'वह मुसलमान हो गया है।' उसने कहा है, 'मुसलमान क्या नास्तिकसे भी बड़े हैं?' हाथमें जब कुछ रुपये जम गये तब अज्ञातवाससे निकलकर फिर वह पूर्ण-परिस्फुटित कलाकारके रूपमें 'बोहेमियनी' करने लगा। शिष्य जुट गये और शिष्याएँ भी। चश्मा-धारी तरुणियाँ उसके स्टूडियोमें आधुनिक बेआबरू-रीतिसे जिन नग्न-मनस्तत्त्वोंकी आलोचना करने लगीं उसकी कालिमापर जमने लगा सिगरेटका धुआँ। परस्पर एक दूसरेके प्रति कटाक्ष और उँगलीका इशारा कर-करके कहने लगे सब, 'पॉजिटिव्ली वलगर।'

विभा थी इस गुटके बिलकुल बाहर। कालेजके प्रथम सोपानके पास ही अभीकके साथ हो गया उसका परिचय शुरू। अभीककी उमर तब थी अठारह सालकी, चेहरेपर नवयौवनका तेज चमचमा रहा था और उसका नेतृत्व बड़ी उमरके लड़कोंने भी स्वीकार कर लिया था।

ब्राह्म-समाजमें लालन-पालन होनेसे विभामें पुरुषोंके साथ मिलने-जुलनेका संकोच कतई नहीं था, किन्तु विघ्न उपस्थित हुआ कालेजमें। उसके प्रति किसी-किसी लड़केकी अशिष्टता प्रकट होने लगी हास्य-कटाक्ष-इंगित-आभासके माध्यममें। और एक दिन तो एक शहरी लड़केकी अभद्रताने ज्यादतीका रूप ले लिया। इसपर अभीककी नजर पड़ते ही वह उस लड़केको पकड़के घसीट लाया विभाके पास, और बोला, "माफी माँगो।" माफी उसे माँगनी ही पड़ी हकलाते-हुए नतमस्तक होकर। उसके बादसे अभीकने दायित्व लिया विभाके

संरक्षणका। इस वातको लेकर उसे अनेक वक्रोक्तियोंका शिकार वनना पड़ा, किन्तु उसकी चौड़ी छातीसे टकराकर वाक्यवाण सव अलग जा गिरे ; उसने किसीकी कुछ परवाह ही नहीं की। विभाने लोगोंकी कानाफूसीसे अत्यन्त संकोच अनुभव किया, किन्तु साथ ही उसके मनमें एक तरहके रोमांचकर आनन्दकी अनुभूति भी हुई।

विभाके चेहरेपर रूपकी अपेक्षा लावण्य कहीं वड़ा है। कैसे वह मनको आकर्षित करता है, व्याख्या करके वताया नहीं जा सकता। अभीकने उससे एक दिन कहा था, "अनाहूतके भोजमें मिष्टान्नमितरे जनाः। किन्तु तुम्हारा सौन्दर्य इतर-जनका मिष्टान्न नहीं, वह तो सिर्फ कलाकारका ही है,– लिओनार्डो डा ह्विञ्चीके चित्रके साथ ही उसका मेल है, इन्स्क्रूटेब्ल, अचिन्त्य !"

एक वार कालेजकी परीक्षामें विभा अभीकको लाँघ गई थी, इसपर वह वहुत रोई और अपनेपर उसे गुस्सा भी खूब आया। मानो यह उसका अपना ही असम्मान हो। वह अभीकसे कहती, "तुम रात-दिन सिर्फ चित्रोंके पीछे पड़कर परीक्षामें पिछड़ जाते हो, मुझे वड़ी शरम आती है।"

वात दैवसे पासके वरण्डेमें खड़ी विभाकी एक सखीके कानमें पड़ते ही उसने आँखें मटकाकर कहा था, "क्या वात है ! तुम्हारे ही गर्वसे तो हूँ मैं 'गरविनी', रूपसी भी हूँ तुम्हारे ही रूपसे !"

अभीकने कहा, "कण्ठस्थ-विद्याके दिग्गजगण जानते ही नहीं कि मैं किस मार्क-शून्य परीक्षामें पास करता चला जा रहा हूँ। मुझे चित्र वनाते देखकर तुम्हारी आँखोंमें आँसू उतर आते हैं, किन्तु तुम्हारी सूखी पण्डिताई देखकर मेरी आँखोंका तो पानी ही सूख जाता है। तुम हरगिज नहीं समझोगी, क्योंकि तुमलोग नामी दलके पैरों-तले पड़ी रहती हो आँख मींचकर, और हमलोग रहते हैं वदनाम दलके शिरोमणि वनकर।"

इस चित्राङ्कनको लेकर दोनोंमें एक तरहका तीव्र द्वन्द्व-सा था। विभा अभीकके चित्रोंको समझ ही नहीं सकती थी, यह वात सच है। अन्य लड़कियाँ जव उसके चित्रोंके विषयमें शोर मचातीं और गलेमें माला पहनातीं, तो विभा

उसे अशिक्षितोंकी मूर्खताका पाखंड समझकर लज्जित होती, किन्तु तीव्र क्षोभसे छटपटाता रहता अभीकका मन विभाकी अभ्यर्थना न पाकर। देशवासियोंने उसके चित्रोंको महज एक पागलपन समझा, और विभाने भी मन-ही-मन उन्हींका साथ दिया, यह उसके लिए असह्य है। उसके मनमें बार-बार यही कल्पना जागा करती है कि एक दिन जब वह युरोप जायगा और वहाँ उसकी जयध्वनि गूँज उठेगी तब विभा भी गूँथने बैठेगी जयमाला।

रविवारका सवेरा है। ब्रह्म-मन्दिरकी उपासनासे लौटकर विभाने देखा कि अभीक बैठा है उसके कमरेमें। पुस्तकोंकी पार्सलका पैकिंग-पेपर पड़ा था रद्दीकी टोकनीमें। उसे उठाकर कलमसे लकीरें खींचकर चित्र बना रहा है वह।

विभाने पूछा, "अचानक यहाँ कैसे?"

अभीकने कहा, "संगत कारण बता सकता हूँ, पर वह होगा गौण, और मुख्य कारणको स्पष्ट बताऊँ तो वह संगत न होगा। और तुम चाहे जो भी समझो, पर ऐसा सन्देह न करना कि चोरी करने आया हूँ।"

विभा अपनी टेबिलकी कुरसीपर बैठ गई, बोली, "जरूरत हो तो चोरी भी कर सकते हो,- मैं पुलिस नहीं बुलाऊँगी।"

अभीकने कहा, "आवश्यकताके बाये-हुए मुँहके सामने तो नित्य ही रहता हूँ मैं। पराया धन हरण करना अनेक क्षेत्रोंमें पुण्यकर्म है, किन्तु मुझसे इसलिए नहीं बनता कि कहीं अपवाद धोखा न दे जाय पवित्र नास्तिक-मतको! धार्मिकोंकी अपेक्षा हमलोगोंको बहुत ज्यादा सावधानीसे चलना पड़ता है, खासकर अपने नेति-देवताकी इज्जत बचानेके लिए।"

"बहुत देरसे बैठे हो तुम?"

"हाँ, बैठा तो बहुत देरसे ही हूँ। बैठा-बैठा मनोविज्ञानकी एक दुःसाध्य समस्याको मन-ही-मन हिला-डुला रहा हूँ कि 'तुमने काफी शिक्षा प्राप्त की है और बाहरसे देखनेमें मालूम होता है कि बुद्धि भी कुछ है, फिर भी

भगवानपर तुम विश्वास कैसे करती हो!' अभी तक कुछ समाधान नहीं कर पाया। शायद बार-बार तुम्हारे घर आकर इस रिसर्चके कामको मुझे पूरा कर लेना पड़ेगा।"

"फिर तुम मेरे धर्मके पीछे पड़े!"

"महज इसलिए कि तुम्हारा धर्म मेरे पीछे पड़ा-हुआ है। हम दोनोंके बीच उसने विच्छेदकी दीवार खड़ी कर दी है। मेरे लिए वह मर्मभेदक है। मैं उसे क्षमा नहीं कर सकता। तुम मुझसे विवाह नहीं कर सकतीं, महज इसलिए कि तुम जिसपर विश्वास करती हो, मैं उसपर नहीं करता, क्योंकि मेरे बुद्धि है। किन्तु तुमसे ब्याह करनेमें मुझे तो कोई आपत्ति नहीं है, भले ही तुम नासमझोंकी तरह सत्य-असत्य चाहे जिसपर विश्वास क्यों न करती रहो। नास्तिककी जात तो तुम मार नहीं सकतीं। मेरे धर्मकी श्रेष्ठता यहींपर है। सब देवताओंसे तुम मेरे लिए अधिक प्रत्यक्ष सत्य हो, इस बातको भुला देनेके लिए एक भी देवता नहीं है मेरे सामने।"

विभा चुप बैठी रही। थोड़ी देर बाद अभीक कह उठा, "तुम्हारे भगवान क्या मेरे पिता जैसे ही हैं। मुझे त्याज्यपुत्र कर दिया है उन्होंने?"

"ओह, क्या बक रहे हो!"

अभीक जानना चाहता है कि ब्याह न करनेका मजबूत कारण कहाँ है। बातको विभाके मुँहसे कहला लेना चाहता है वह, विभा चुप रह जाती है।

जीवनके आरम्भसे ही विभा अपने पिताकी ही लड़की है सम्पूर्ण-रूपसे। इतना प्यार और इतनी भक्ति वह और-किसीको भी नहीं दे सकी। उसके पिता सतीश भी अपनी इस लड़कीपर असीम स्नेह उँड़ेलते रहे हैं। इसपर उसकी माके मनमें जरा-कुछ ईर्ष्या थी। विभाने बतखें पाली थीं, उसकी मा बराबर खिटखिट किया करती थीं कि 'ये बहुत ज्यादा किंकियाती रहती हैं।' विभाने आसमानी रंगकी साड़ी और जाकेट बनवाई थी, माने कहा था, 'यह रंग विभाके बिलकुल ही अच्छा नहीं लगता।' विभा अपनी ममेरी बहनको बहुत चाहती थी। उसने उसके ब्याहमें जानेकी जिद की तो मा

कह बैठीं, 'वहाँ मैलेरिया है।' माकी तरफसे पद-पदपर बाधा पाते-पाते बापपर उसकी निर्भरता और भी गभीर और मज्जागत हो गई थी।

माकी मृत्यु हुई पहले। उसके बाद बापकी सेवा करना ही विभाके जीवनका एकमात्र व्रत रहा बहुत दिनों तक। अपने स्नेहशील पिताकी सम्पूर्ण इच्छाओंको उसने अपनी इच्छा बना लिया था। सतीश अपनी सारी सम्पत्ति दे गये हैं लड़कीको; किन्तु ट्रस्टीके हाथमें। विभाके लिए नियमित मासिक खर्चा बँधा-हुआ है। सब रुपये थे उपयुक्त पात्रके लिए, विभाके विवाहकी प्रतीक्षामें। कमसे कम अनुपयुक्त कौन है, इस विषयमें उसे कोई सन्देह ही नहीं था। एक दिन अभीकने इस विषयमें बात छेड़ी थी; कहा था, "जिन्हें तुम कष्ट देना नहीं चाहतीं वे तो हैं नहीं, और कष्ट जिसपर निष्ठुरतासे प्रहार कर रहा है वह आदमी है ज्यों-का-त्यों जीवित। हवामें छुरी चलानेमें तुम्हारा हृदय व्यथित होता है, और इस रक्त-मांसकी छातीमें भोंकनेमें तुम्हें जरा भी दया-दर्द नहीं!" सुनकर विभा रोती-हुई चली गई। अभीक समझ गया कि भगवानको लेकर तो तर्क चल सकता है, पिताके विषयमें कदापि नहीं।

सवेरेके करीब दस बजे होंगे। विभाकी भतीजी सुस्मिने आकर कहा, "बुआजी, बहुत दिन चढ़ गया है।" विभाने उसके हाथमें चाभियोंका गुच्छा थमाते-हुए कहा, "जा, तू कोठार खोलकर निकाल सामान, मैं अभी आई।"

बेकारोंके कामकी बँधी-हुई कोई सीमा न होनेसे ही उनका काम बढ़ जाता है। विभाकी गृहस्थी भी वैसी ही है। घरका दायित्व आत्मीयोंकी तरफसे हलका होनेसे ही अनात्मीयोंकी तरफ हो गया है बहु-विस्तृत। इस निजकी गढ़ी गृहस्थीका काम अपने हाथसे करनेका उसे अभ्यास हो गया है, इसलिए कि नौकर-चाकर कहीं किसीकी अवज्ञा न कर बैठें।

अभीकने कहा, "अन्याय करोगी तुम इसी वक्त जाकर, सिर्फ मेरे प्रति ही नहीं, सुस्मिके प्रति भी। तुम उसे स्वाधीन कर्तृत्व करनेका अवसर क्यों नहीं देतीं? 'डोमिनियन स्टेटस्' कमसे कम आज-भरके लिए। इसके अलावा, मैं

तुम्हें लेकर एक परीक्षा करना चाहता हूँ। तुमसे मैंने कभी कोई कामकी वात नहीं कही, आज कहके देखना चाहता हूँ। नया अनुभव होगा।"

विभाने कहा, "सो ही होने दो, बाकी क्यों रहे!"

अपनी जेवमेंसे अभीकने चमड़ेका एक केस निकालकर खोलके दिखाया। कलाईको घड़ी थी उसमें एक। घड़ी प्लाटिनमकी थी, मणिवन्ध था सोनेका, हीरेके टुकड़े जड़े थे उसमें। वोला, "तुम्हें बेचना चाहता हूँ इसे।"

"दंग कर दिया तुमने! वेचोगे?"

"हाँ, वेचूँगा। आश्चर्य क्यों हुआ तुम्हें?"

विभा क्षण-भर स्तब्ध रहकर बोली, "यह घड़ी तो तुम्हें मनीपाने दी थी तुम्हारे जन्म-दिनमें। ऐसा लगता है कि मानो उसके हृदयकी व्यथा अब भी इसमें धुकधुक कर रही है। जानते हो, उसने कितना दुःख पाया था, कितनी निन्दा सही थी, और कितना दुःसाध्य अपव्यय किया था अपने इस उपहारको तुम्हारे योग्य बनानेमें?"

अभीकने कहा, "यह घड़ी दी तो उसीने थी, किन्तु, यह उसने अन्त तक नहीं जानने दिया कि किसने दी है। पर, मैं तो मूर्ति-पूजक नहीं जो अपनी छातीकी जेवमें इस चीजकी वेदी बनाकर मन-मन्दिरमें दिन-रात शंख-घण्टा बजाता रहूँ!"

"मुझे आश्चर्यमें डाल दिया है तुमने। कुछ ही महीने तो हुए हैं अभी, वेचारी मोतीझरामें—"

"अब वह तो सुख-दुःखके अतीत है।"

"अन्तिम क्षण तक वह अपने इसी विश्वासको लेकर मरी थी कि तुम उसे प्यार करते हो।"

"गलत विश्वास नहीं किया उसने।"

"तो?"

"तो और क्या! वह नहीं है, किन्तु उसके प्रेमका दान आज भी यदि मुझे फल दे, तो इससे बढ़कर और क्या हो सकता है?"

विभाके चेहरेपर अत्यन्त वेदनानुभूतिका लक्षण दिखाई दिया। कुछ देर चुप रहकर उसने कहा, "इतना बड़ा कलकत्ता पड़ा था, फिर खासकर मेरे पास ही क्यों आये बेचनेको ?"

"क्योंकि मुझे मालूम है कि तुम मोल-तोल नहीं करोगी।"

"इसके मानी हैं कि कलकत्तेके बाजारमें मैं ही सिर्फ ठगानेके लिए तैयार बैठी हूँ ?"

"इसके मानी हैं कि प्रेम अपनी खुशीसे ठगाता है।"

ऐसे आदमीपर गुस्सा आना बड़ा कठिन है। जबरदस्ती छाती फुलाकर लड़कपन करना है यह। इस बातको जानता ही नहीं वह कि किसी बातमें लज्जाका कारण भी है कोई। यही उसका अकृत्रिम अविवेक है। यह जो उचित-अनुचितकी बाड़ोंको अनायास ही छलाँग-छलाँगकर चलना है उसका, इसीसे स्त्रियोंका स्नेह उसे इतना ज्यादा खींचता रहता है। डाँटने-फटकारनेका कोई मौका ही नहीं मिलता इसमें। जो लोग अपने कर्तव्य-बोधका काफी खयाल रखकर चलते हैं, स्त्रियाँ उनके पैरोंकी धूल माथेसे लगाती हैं। और जिन दुर्दान्त-अशान्तोंके कोई बला ही नहीं न्याय-अन्यायकी उनको स्त्रियाँ बाहु-बन्धनमें बाँधती हैं।

अपनी टेबिलके स्याही-सोखपर कुछ देर तक नीली पेन्सिलसे दाग काट-कूटकर अन्तमें विभाने कहा, "अच्छा, मेरे पास अगर रुपये हुए तो यों ही दे दूँगी तुम्हें। पर तुम्हारी यह घड़ी मैं हरगिज नहीं खरीदूँगी।"

उत्तेजित कंठसे अभीकने कहा, "भीख ? तुम्हारे समान धनी अगर होता मैं, तो तुम्हारा दान ले लेता मैं उपहार-स्वरूप, और फिर देता तुम्हें प्रत्युपहार समान मूल्यका। अच्छा, पुरुषका कर्तव्य मैं ही करता हूँ पूरा। यह लो घड़ी, एक पैसा भी नहीं लूँगा तुमसे।"

विभाने कहा, "स्त्रियोंका तो 'लेनेका' ही सम्बन्ध है। इसमें कोई लज्जा नहीं। पर, इसके मानी 'यह घड़ी' नहीं। अच्छा, सुनूँ तो सही, क्यों तुम इसे बेच रहे हो ?"

"तो सुनो, तुम जानती हो कि मेरी एक अत्यन्त वेहया फोर्ड-गाड़ी है। उसके चाल-चलनकी ढिलाई असह्य हो उठी है। एक मैं ही हूँ जो उसकी दशम-दशाको रोके-हुए हूँ। आठ सौ रुपये देनेसे ही उसके बदलेमें उसके बाप-दादोंकी उमरकी एक पुरानी क्राइस्लर-गाड़ी मिलनेकी आशा है। उसे नई बना सकूँगा मैं अपने हाथोंके बदौलत।–"

"क्या होगा क्राइस्लर-गाड़ीका?"

"ब्याह करने नहीं जाऊँगा।"

"ऐसा शिष्ट कार्य तुम करोगे, यह सम्भव नहीं।"

"ताड़ा खूब तुमने! तो, पहले मैं तुम्हींसे पूछता हूँ, शीलाको देखा है, कुलदाचरण मित्रकी लड़की?–"

"देखा है तुम्हारे ही साथ जब-तब और जहाँ-तहाँ।"

"हाँ, मेरे बगल ही मे उसने जगह कर ली है छाती फुलाकर, औरोंकी गति रोककर। वह ठहरी प्रगतिशीला! शिष्ट-समाज दाँतों-तले उँगली दबायेगा, इसीमें उसे आनन्द है।"

"सिर्फ इतना ही क्यों, लड़की-समाजकी छातीमें शूल बिंध जायगा, इसमें भी तो कम आनन्द नहीं!"

"मुझे भी याद थी यह बात, पर, तुम्हारे मुँहसे सुननेमें अच्छी लगी। अच्छा, जी खोलके बताना, उस लड़कीका सौन्दर्य क्या अन्याय-प्रकारका नहीं है, जिसे कहा जा सकता है 'विधाताकी ज्यादती'?"

"सिर्फ सुन्दरी लड़कियोंके विषयमें ही विधाताको मानते होगे क्यों?"

"निन्दा करनेकी जरूरत आ पड़ती है तो, जैसे भी हो, एक प्रतिपक्षको खड़ा करना ही पड़ता है। दुःखके दिनोंमें जब रूठनेकी ताकीद आई तब कवि रामप्रसादने सामने माको खड़ा करके गाया था, 'तुझे मैं मा कहके अब न पुकारूँगा कभी।' अब तक पुकारनेसे जो फल हुआ था, बिना पुकारे भी फल उससे ज्यादा नहीं हुआ, लाभमें इतना जरूर हुआ कि भक्तने निन्दा करनेकी हवस मिटा ली। मैंने भी निन्दा करते वक्त विधाताका नाम ले लिया है।"

"निन्दा किस बातकी ?"

"बताता हूँ। एक दिन फुटबॉलके मैदानसे शीलाको मैं अपनी गाड़ीमें बिठाकर ले जा रहा था खड़बड़-खड़बड़ शब्द करता-हुआ, पीछेके पदातिकोंके नासारन्ध्रोंमें धुआँ छोड़ता-हुआ। इतनेमें, सामनेसे श्रीमती पकड़ासी आती दिखाई दीं,—तुम तो उन्हें जानती ही हो, 'लम्बे गज'की अत्युक्तिसे भी उन्हें 'काम-चलाऊ' कहा जाय तो हुचकी आने लगती है, वे चली आ रही थीं अपनी नई गाड़ी 'फॉयट'में बैठीं। हाथ उठाकर हमारी गाड़ी रोककर कुछ देर तक वे 'हाँ जी, हूँ जी' करती रहीं, और क्षण-क्षणमें कनखियोंसे देखती रहीं मेरी जराजीर्ण गाड़ीकी तरफ। सचमुच तुम्हारे भगवान अगर साम्यवादी होते, तो महिलाओंके चेहरोंमें इतना ज्यादा ऊँचा-नीचा तारतम्य करके राह-चलते लोगोंके मनमें इस तरह आग न लगाते रहते।"

"इसीसे शायद तुम—"

"हाँ, इसीलिए मैंने तय किया है कि जितनी जल्दी हो सके, शीलाको क्राइस्लर-गाड़ीमें बैठाकर पकड़ासी-गृहिणीकी नाकके सामनेसे सिंगा फूँकतेहुए निकल जाना है। अच्छा, एक बात पूछता हूँ, सच बताना, तुम्हारे मनमें क्या जरा भी—"

"मुझे इसमें क्यों घसीटते हो ? विधाताने मेरे रूपको लेकर तो बहुत ज्यादती नहीं की। और फिर मेरी गाड़ी भी इस लायक नहीं कि तुम्हारी गाड़ीको मात दे सके।"

अभीक चटसे कुरसी छोड़कर उठ खड़ा हुआ, और विभाके पाँवके पास बैठकर उसका हाथ थामकर कहने लगा, "किससे किसकी तुलना ! आश्चर्य हो, आश्चर्य हो तुम ! मैं कहता हूँ, तुम आश्चर्य हो ! मैं तुम्हें देखता हूँ और भीतरसे डरता रहता हूँ कि किसी दिन चटसे मैं तुम्हारे भगवानको न मान बैठूँ। तब फिर मेरा कभी भी किसी कालमें परित्राण नहीं होनेका। तुममें मैं ईर्ष्या नहीं जगा सका किसी भी तरह। कमसे कम तुमने उसे मुझे जानने नहीं दिया। हालाँ कि तुम जानती हो—"

"बस, चुप। मैं कुछ नहीं जानती। मैं सिर्फ इतना ही जानती हूँ कि अद्भुत हो तुम, अद्भुत हो, सृष्टिकर्ताका अट्टहास्य हो तुम!"

अभीकने कहा, "मुझे तुम मुँह खोलके बताओगी नहीं, पर मैं निश्चित समझ रहा हूँ कि शीलाके सम्बन्धमें तुम मेरी साइकॉलॉजी जानना चाहती हो। उसका मुझे घोरतर अभ्यास हो गया है,—कम उमरमें जैसे सिगरेटका अभ्यास हुआ था। चक्कर आता था, फिर भी छोड़ता नहीं था। मुँहमें कड़ुई लगती थी, किन्तु मनमें होता था गर्व। वह जानती है कि किस तरह दिनपर दिन नशेकी मौताद बढ़ाई जाती है। स्त्रियोंके प्रेममें जो मदिरा है वही मेरे लिए इन्स्पिरेशन (प्रेरणा) है। मैं कलाकार ठहरा। और वह ठहरी मेरी 'पालकी हवा'। उसके बिना मेरी तूलिका अटक जायगी बालूके टापूमें। मैं समझ जाता हूँ कि मेरे पास बैठनेसे शीलाके हृत्पिण्डमें एक तरहकी लाल रंगकी आग धधकती रहती है, डेन्जर सिग्नल, और उसका तेज प्रवेश करता है मेरी नस-नसमें। इसमें मेरा अपराध न मान लेना, तपस्विनी। सोचती होगी उसमें मेरा विलास है,—नहीं जी नहीं, उसकी मुझे जरूरत है।"

"इसीसे तुम्हें इतनी जरूरत है क्राइस्लर-गाड़ीकी।"

"हाँ, मैं मानता हूँ इस बातको। शीलामें जब गर्व जागता है तो उसकी झलक बढ़ जाती है। स्त्रियोंको इसीलिए तो जुटाने पड़ते हैं इतने गहने-कपड़े। हमलोग चाहते हैं स्त्रियोंका माधुर्य और वे चाहती हैं पुरुषका ऐश्वर्य। उसीकी सुनहली पूर्णतापर उनके प्रकाशका बैकग्राउण्ड है। प्रकृतिका यह षड़यन्त्र है पुरुषोंको बड़ा बनानेके लिए। सच है या नहीं, बताओ?"

"हो सकता है सच। किन्तु तर्क इस बातका है कि ऐश्वर्य कहते किसे हैं। क्राइस्लरकी गाड़ीको जो लोग ऐश्वर्य कहती हैं, मैं तो कहूँगी कि वे पुरुषको छोटा बनानेकी तरफ खींचा करती हैं।"

अभीक उत्तेजित होकर बोल उठा, "मालूम है, मालूम है,—तुम जिसे ऐश्वर्य कहती हो उसीके सर्वोच्च शिखरपर तुम मुझे पहुँचा सकती थीं। तुम्हारे भगवान जो हमारे बीच आ खड़े हुए।"

अभीकका हाथ छुड़ाकर विभा बोली, "इस एक ही बातको तुम बार-बार मत कहो। मैं तो बराबर उलटा ही सुनती आई हूँ। ब्याह कलाकारके लिए गलेकी फाँसी है, इन्सपिरेशनका दम घोंट देता है वह। तुम्हें अगर मैं बड़ा कर सकती, मुझमें अगर वह शक्ति होती, तो—"

अभीकने भीतरसे अपनेको झकझोरते-हुए कहा, "कर सकती क्या, किया है। मुझे यही दुःख है कि मेरे उस ऐश्वर्यको तुमने पहचाना नहीं। अगर जान जातीं, तो अपने धर्म-कर्मके सब बन्धनोंको तोड़कर मेरी सङ्गिनी होकर मेरे पास आ खड़ी होतीं ; किसी बाधाको नहीं मानतीं। नाव किनारे आकर लगती है, किन्तु फिर भी, यात्रियोंको तीर्थका घाट ढूँढ़े नहीं मिलता। मेरी भी ठीक वही दशा है। 'वी', मेरी मधुकरी, कब तुम मेरा सम्पूर्ण-रूपसे आविष्कार करोगी ?"

"जब मेरी तुम्हें कोई जरूरत नहीं रह जायगी।"

"ये-सब अत्यन्त खोखली बातें हैं, बहुत-कुछ झूठकी हवासे फुलाई-हुई। स्वीकार करो कि 'मेरे विना नहीं चल सकता' यह जानता-हुआ ही उत्कण्ठित है तुम्हारा सम्पूर्ण शरीर-मन। यह क्या तुम मुझसे छिपाओगी ?"

"यह बात कहनेसे भी क्या होता है ! और छिपाऊँगी भी क्यों ? मनमें चाहे जो भी हो, मैं कंगलापन नहीं दिखाना चाहती।"

"मैं चाहता हूँ। मैं कंगाल हूँ। मैं दिन-रात कहूँगा, मैं चाहता हूँ, मैं तुम्हींको चाहता हूँ।"

"और साथ-साथ यह भी कहोगे कि क्राइस्लर-गाड़ी भी चाहता हूँ।"

"बस, यही तो 'जेलेसी' है। पर्वतो वह्निमान् धूमात्। बीच-बीचमें जम उठने दो धुआँ ईर्ष्याका, प्रमाणित हो जाने दो प्रेमकी अन्तर्गूढ़ आगको। बुझा-हुआ 'वलकैनो' नहीं है तुम्हारा मन। ताज़ा 'विसुवियस' है।"—यह कहता-हुआ खड़ा हो गया अभीक, हाथ उठाकर बोला, "हुर्रे !"

"यह क्या लड़कपन कर रहे हो ! इसीलिए आये होगे सवेरे-सवेरे, पहलेसे प्लैन बनाकर ?"

"हाँ, इसीलिए। मानता हूँ इस बातको। नहीं तो, ऐसे मुग्धको भी जानता हूँ किसी-किसीको, जिसे यह घड़ी अभी तुरत बेच सकता हूँ बिना आपत्तिके बेजा कीमतपर। पर तुमसे तो मैं सिर्फ दाम लेने नहीं आया, जहाँ तुम्हारी व्यथाका उत्स है वहाँ चोट करके अंजलि रोपना चाहता था। किन्तु अभागेके भाग्यमें न तो यही बदा था, न वही।"

"कैसे जाना? भाग्य तो हमेशा 'डमी'की तरह खुले ताशका खेल नहीं खेलता। मगर देखो, एक बात तुमसे कहे देती हूँ,—तुमने कभी-कभी मुझसे पूछा है कि तुम्हारी लीला देखकर मेरे मनमें काँटा चुभता है या नहीं। सच कहती हूँ, चुभता है काँटा।

अभीक उत्तेजित होकर बोल उठा, "यह तो सुसंवाद है!"

विभाने कहा, "इतने उत्फुल्ल मत होओ। यह जेलेसी नहीं है, अपमान है। लड़कियोंके साथ तुम्हारा यह 'मैं तेरा महमान'-वाला सखापन, यह असभ्य असंकोच, इससे सम्पूर्ण स्त्री-जातिके प्रति तुम्हारी अश्रद्धा प्रकट होती है। मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"यह तुम्हारी कैसी बात हुई। श्रद्धाकी क्या व्यक्तिगत विशेषता नहीं है? जात-की-जातको, जहाँ जो भी दिखाई दे उसीको श्रद्धा करता फिरूँगा? मालकी जाँच भी नहीं, एकदम 'ह्वोलसेल' (पैकारी) श्रद्धा! इसीको कहते हैं 'प्रोटेक्शन' (सुरक्षा), व्यवसायमें बाहरसे कृत्रिम टैक्स लगाकर मूल्य बढ़ाना।"

"झूठी बहस मत करो।"

"अर्थात्, तुम करोगी बहस, मैं न करूँ। ठीक ही कहा है किसीने, 'आया है काल भयङ्कर, नारियाँ करेंगी बात, रहेगा पुरुष निरुत्तर'।"

"अभी, तुम तो सिर्फ बातकी काट करनेकी ताकमें हो। तुम जानते हो अच्छी तरह कि मैं कहना चाहती थी, स्त्रियोंसे स्वभावत: कुछ दूरत्व रखकर चलना पुरुषोंके लिए भद्रता है।"

"स्वभावत: दूरत्व रखना या अस्वभावत:? सुनो, हमलोग आधुनिक हैं, मॉडर्न, नकली भद्रताको नहीं मानते, असली स्वभावको मानते हैं। शीलाको

पास विठाकर खड़खड़ाती-हुई फोर्ड चलाता हूँ, स्वाभाविकता तो यहाँ विलकुल पास-पास होती है। भद्रताके खातिर बीचमें डेढ़-हाथ जगह छोड़ दी जाय तो उससे अश्रद्धा ही की जायगी स्वभावकी।"

"अभी, तुमलोगोंने अपनी तरफसे स्त्रियोंको विशेष मूल्य देकर उन्हें बहुमूल्य बनाया था, अपनी गरजसे ही उनकी कीमत नहीं घटाई। उस कीमतको आज अगर वापस ले लो, तो अपनी खुशीको ही कर दोगे सस्ती, धोखा दोगे अपने ही पावनेको। पर, व्यर्थ ही बक रही हूँ मैं, मॉडर्न समय ही घटिया है।"

अभीकने जवाब दिया, "घटिया मैं नहीं कहूँगा, कहूँगा बेहया है वह। प्राचीन कालके वृद्ध शिव आँख मीचके बैठे हैं ध्यानमें ; और इस जैमानेके नन्दी-भृङ्गी आईना हाथमें लिये अपने चेहरोंका कर रहे हैं व्यंग, जिसे कहते हैं 'डिबंकिंग' (तल्लसे पतन)। पैदा हुआ हूँ इस कालमें, बम्-भोलानाथका चेला बनकर कपारपर आँखें चढ़ाकर बैठा नहीं रह सकता,– बल्कि नन्दी-भृङ्गीकी भद्दी-भोंड़ी मुखाकृतिकी नकल की जाय तो आजकल नाम हो सकता है।"

"अच्छा-अच्छा, जाओ नाम करने। दसों दिशाओंमें घूमते फिरो मुँह बिरा-बिराकर। किन्तु उसके पहले एक बात तुम मुझे सच-सच बताओ, तुमसे शह पाकर दुनिया-भरकी लड़कियाँ जो तुम्हें लेकर इस तरह खींचातानी करती हैं, इससे क्या तुम्हारी 'अच्छे-लगने' की धार भोथरी नहीं हो जाती? तुमलोग बात-बातमें जिसे कहते हो 'थ्रिल' (रोमांच) उसे क्या धक्कम-धक्केमें पैरों-तले रौंदा नहीं जाता?"

"तो सच ही कहता हूँ, सुनो थी, जिसे कहते हैं 'थ्रिल', जिसे कहते हैं 'एक्सटैसी' (परमानन्द), वह है अव्वल नम्बरकी चीज। तकदीरसे ही मिलती है कचित्-कभी। किन्तु, तुम जिसे कह रही हो भीड़में 'खींचातानी' वह है सेकेण्डहैण्ड-दूकानका माल, कहीं दागी है तो कहीं फटा-टूटा, किन्तु बाजारमें वह भी बिकता है गम दाममें। सर्वोत्कृष्ट चीजके पूरे दाम कितने धनी दे सकते हैं?"

"तुम दे सकते हो, 'अभी'! अवश्य दे सकते हो, पूरा मूल्य जो है तुम्हारे हाथमें। किन्तु अद्भुत तुम्हारा स्वभाव है। फटी-पुरानी-मैली चीजोंपर आर्टिस्टोंका कुछ विशेष आकर्षण होता है, कुतूहल होता है। सम्पूर्ण वस्तु तुमलोगोंकी दृष्टिमें 'पिक्चरेस्क' (चित्रवत्) नहीं होती। पर, जाने दो इन सब व्यर्थकी बहसको। फिलहाल 'क्राइस्लर'के नाटकको जहाँ तक बने आगे बढ़ा दिया जाय।"

इतना कहकर विभा कुरसीसे उठकर बगलके कमरेमें चली गई। और वापस आकर अभीकके हाथमें नोटोंका एक बण्डल देती-हुई बोली, "यह लो तुम्हारा इन्स्पिरेशन, सरकार-बहादुरकी छाप-शुदा। पर, इनके लिए तुम मुझे अपनी घड़ी लेनेको न कहना।"

कुरसीपर सिर रखकर अभीक बैठा रहा। विभाने उसी क्षण चटसे उसका हाथ खींचकर कहा, "मुझे तुम गलत मत समझो, 'अभी'! तुम्हारे पास नहीं है, मेरे पास है, ऐसे मौकेसे–"

विभाको रोकते-हुए अभीक बोल उठा, "मेरे पास नहीं है, मैं अत्यन्त अभावग्रस्त हूँ। तुम्हारे हाथमें है मौका, उसे पूरा करनेका। क्या होगा इन रुपयोंका?"

विभाने अभीकके हाथपर स्निग्धताके साथ हाथ फेरते हुए कहा, "जो नहीं कर सकती उसका दुःख रह गया हमेशाके लिए मेरे मनमें। जितना कर सकती हूँ उसके सुखसे क्यों मुझे वंचित करोगे?"

"नहीं नहीं नहीं, हरगिज नहीं। तुमसे ही सहायता लेकर शीलाको मैं गाड़ीमें बिठाकर हवा खिलाता फिरूँगा? इस प्रस्तावपर तुम मुझे धिक्कार दोगी, यही सोचा था मनमें,–गुस्सा होगी, यही थी आशा।"

"गुस्सा मैं क्यों होऊँ? तुम्हारी शरारत कितनी देरकी है? वह घातक है शीलाके लिए, तुम्हारे लिए जरा भी नहीं। ऐसा लड़कपन तुम्हारा मैं कितनी बार देख चुकी हूँ, मन-ही-मन हँसती रही हूँ। जानती हूँ मैं, कुछ दिनके लिए इस खेलके बिना तुम्हारा चल नहीं सकता। यह भी जानती

हूँ कि स्थायी होनेसे और भी अचल हो जायगा। हो सकता है कि तुम कुछ पाना चाहते हो, किन्तु, तुम्हें कोई पाये, यह तुम नहीं सह सकते।"

"बी, मुझे तुम बहुत ज्यादा जानती हो, इसीसे ऐसी घोरतर निश्चिन्त रहती हो। जान गई हो कि मुझे अच्छी लगती हैं लड़कियाँ, किन्तु वह अच्छा-लगना नास्तिकका ही है, उसमें बन्धन नहीं है। पत्थरके बने मन्दिरमें उस पूजाको बंद नहीं करूँगा। बान्धवियोंके साथ गलबहियाँके गद्गद-दृश्य कभी-कभी देखे हैं मैंने, उस विह्वल स्त्रैणतासे मेरा जी मिचलाने लगता है। किन्तु स्त्रियाँ मेरे लिए नास्तिककी देवी हैं, यानी आर्टिस्टकी। आर्टिस्ट मुँह बाकर डूब नही मरता, वह तैरता है, और तैरकर अनायास ही पार हो जाता है। तुम लोभी नहीं हो, तुम्हारे निरासक्त मनका सबसे बड़ा दान है स्वाधीनता।"

विभाने हँसते-हुए कहा, "अपनी 'स्तुति' अभी रहने दो। आर्टिस्ट, तुम लोग बालिग बच्चे हो, अबकी बार जो खेल शुरू किया है उसका खिलौना मेरे ही हाथसे लिया सही।"

"नैव नैव च। अच्छा, एक बात पूछता हूँ। अपने ट्रस्टियोंकी मुट्ठीसे यह रुपया तुमने निकाल कैसे लिया?"

"खुलासा बतानेसे शायद तुम खुश नहीं होगे। तुम्हें मालूम है कि अमर बाबूसे मैथमैटिक्स् सीख रही हूँ मैं।"

"सभी विषयोंमें तुम मुझसे आगे बढ़ जाना चाहती हो, विद्यामें भी?"

"बको मत, सुनो। मेरे ट्रस्टियोंमें एक हैं आदित्य-मामा। खुद वे फर्स्ट क्लास मेडलिस्ट हैं। उनकी धारणा है कि पूरे सहूलियत मिले तो अमर बाबू द्वितीय रामानुजन् हो सकते हैं। उनका हल किया-हुआ एक प्रॉब्लेम मामाने आइन्स्टाइनके पास भेजा था, उसका जो जवाब आया उसे मैंने देखा है। ऐसे आदमीको सहायता देनेके लिए यह जरूरी है कि उसके सम्मानकी पूरी तौरसे रक्षा की जाय। इसीसे मैंने कहा, 'उनसे मैं गणित सीखूँगी।' मामा बहुत खुश हुए, ट्रस्ट-फण्डमेंसे शिक्षा-खाते एक मोटी रकम निकालके उन्होंने मेरे पास रख दी है। उसीमेंसे मैं उन्हें वृत्ति दिया करती हूँ।"

अभीकका चेहरा कैसा-तो एक तरहका हो गया। जरा हँसनेकी कोशिश करते-हुए उसने कहा, "ऐसे आर्टिस्ट भी शायद हैं जो योग्य सहायता मिलनेपर मिकेल अञ्जेलोकी कमसे कम दाढ़ीके पास तक पहुँच सकते थे।"

"वे योग्य सहायता न मिलनेपर भी पहुँच सकेंगे। अब बताओ, तुम मुझसे रुपये लोगे या नहीं?"

"खिलौनेके दाम?"

"हाँ जी, तुमलोगोंको खिलौनेके दाम देते रहना ही तो हमलोगोंका चिरकालका धर्म है। इसमें दोष क्या है! उसके बाद तो फिर धूरा है ही।"

"क्राइस्लरकी आज यहीं श्राद्ध-शान्ति हो गई। प्रगतिशीलाका गतिवेग टूटी-पुरानी फोर्डमें ही लड़खड़ाता-हुआ चलता रहे, मेरी बलासे! अब ये-सब बातें अच्छी नहीं लगतीं। सुना है, अमर बाबू रुपये जोड़ रहे हैं विलायत जानेके लिए। वहाँसे प्रमाण बाँध लायेंगे कि 'वे साधारण आदमी नहीं हैं'।"

विभाने कहा, "मैं हृदयसे आशा करती हूँ कि ऐसा ही हो। उसमें देशका गौरव है।"

ऊँचे स्वरमें बोल उठा अभीक, "मुझे भी प्रमाणित करना होगा, तुम आशा करो चाहे न करो। उन्हें प्रमाण तो लॉजिकके बँधे रास्तेमें पड़ा मिल जायगा,—आर्टका प्रमाण आविष्कृत होता है रुचिके मार्गमें, और वह है रसिक जनोंका प्राइवेट मार्ग। ग्रैण्ड ट्रंक रोड नहीं है वह। इस आँखोंमें-अँधौटी-बाँधे कोल्हू-घुमानेवालोंके देशसे मेरा काम नहीं चलेगा। जिनके देखनेकी स्वाधीन दृष्टि है, मुझे जाना ही पड़ेगा उनके देशमें। ताकि किसी दिन तुम्हारे मामाको भी कहना पड़े कि मैं भी साधारण आदमी नहीं हूँ; और उनकी भानजीको भी—"

"भानजीकी बात मत कहो। तुम मिकेल अञ्जेलोके समान-मापके हो या नहीं, यह जाननेके लिए उसे किसीकी बाट नहीं देखनी पड़ी। उसके लिए तुम बिना प्रमाणके ही असाधारण हो। बताओ, तुम जाना चाहते हो विलायत?"

"यह तो मेरा दिन-रातका स्वप्न है।"

"तो ले लो-न मेरे इस दानको। प्रतिभाके चरणोंमें मेरा यह मामूला-सा राज-कर है।"

"रहने दो, रहने दो अभी इस बातको। कानोंमें सुर ठीक नहीं लग रहा। सार्थक हो गणित-अध्यापककी महिमा। मेरे लिए यह युग न सही, दूसरा युग सही। बाट देखती रहेगी पॉस्टेरिटी। इतना मैं कहे देता हूं, एक दिन आयेगा जब आधी रातको तकियेमें मुँह छिपाकर तुम्हें कहना ही पड़ेगा कि 'उनके नामके साथ मेरा भी नाम गुँथा रह सकता था हमेशाके लिए, किन्तु न हो सका'।"

"पॉस्टेरिटी तक बाट जोहनेकी नौबत नही आयेगी, 'अभी'! निष्ठुर दण्ड मुझे मिलने लगा है।"

"किस दण्डकी बात कह रही हो तुम, मुझे नहीं मालूम। किन्तु इतना मैं जानता हूँ कि तुम्हारे लिए, जो सबसे बड़ा दण्ड है उसे तुमने समझा ही नहीं, वह है मेरे चित्र। आ गया है नया युग, उस युगकी वरण-सभामें आधुनिक बड़े तख्तपर मेरे दर्शन तुम्हें नहीं मिले।" – इतना कहकर अभीक उठकर चल दिया दरवाजेकी ओर।

विभाने कहा, "जा कहाँ रहे हो?"

"मीटिंग है।"

"काहेकी मीटिंग?"

"छुट्टियोंमें विद्यार्थियोंके साथ दुर्गा-पूजा करना है मुझे।"

"तुम पूजा करोगे?"

"हाँ, मैं ही करूँगा। मैं जो मानता नहीं कुछ भी! मेरे उस न-माननेके खुले आकाशमें तेतीस करोड़ देवता और अपदेवताओंके लिए स्थानकी कमी नहीं होगी। मेरा वह आकाश विश्व-सृष्टिके सारे-के-सारे बचपनके खेलोंको जगह देनेके लिए खाली पड़ा-हुआ है।"

विभा समझ गई कि उसीके भगवानके विरुद्ध यह व्यंग है। कोई तर्क न छेड़कर वह सिर नीचा किये चुपचाप बैठी रही।

अभीक दरवाजेके पाससे लौट आया ; बोला, "देखो, वी, तुम प्रचण्ड नैशनलिस्ट हो। भारतवर्पमें एकता-स्थापनके स्वप्न देखा करती हो। किन्तु, जिस देशमें दिन-रात धर्मको लेकर खून-खराबियाँ हुआ करती हैं उस देशमें सब धर्मोको मिलानेका पुण्य-व्रत मुझ-जैसे नास्तिकोंके ही है। मैं ही भारतवर्पका त्राणकर्ता हूं।"

अभीककी नास्तिकता क्यों इतनी हिंसक हो उठी है, विभा इस बातको जानती है। इसीसे वह उसपर नाराज नही हो सकती। किसी भी तरह उससे सोचते नही वनता कि क्या होगा इसका परिणाम। विभाके पास और जो-भी-कुछ है, वह सब दे सकती है ; सिर्फ अटक जाती है पिताकी इच्छाके पास जाकर। पिताकी वह इच्छा तो कोई मत नहीं है, विश्वास नहीं है, तर्कका विपय नहीं है। वह तो उनके स्वभावका अंग है। उसका प्रतिवाद नहीं हो सकता। वार-वार उसने सोचा है कि इस वाधाका वह लंघन करेगी ; किन्तु अन्ततोगत्वा किसी भी तरह उससे कदम उठाते नहीं बनता।

नौकरने आकर खबर दी, "अमर बावू आये हैं।" सुनते ही अभीक उसी दम वड़ी तेजीसे दनदनाता-हुआ सीढ़ीसे उतरकर चला गया। विभाकी छातीके भीतर ऐंठन शुरू हो गई। पहले तो उसने सोचा कि अध्यापकको कहला दे कि आज पढ़ाई नहीं होगी। किन्तु दूसरे ही क्षण मनको मजबूत करके बोली, "अच्छा, ले आ यहीं।" फिर वोला, "सुन सुन, वैठकमें विठा उन्हें, आती हूँ मैं थोड़ी देरमें।"

नौकरको विदा करके वह उसी क्षण अपने कमरेमें जाकर विस्तरपर पड़ गई औंधी होकर। तकियासे लिपटकर रोने लगी वह।

वहुत देर वाद अपनेको सम्हालकर आँस-मुँह धोकर हँसती-हुई वैठकमें पहुँची ; वोली, "आज मनमें आई थी कि छुट्टी मनाऊँ।"

"तवीयत ठीक नही है क्या?"

"तवीयत तो ठीक है। वात यह है कि बहुत दिनोंसे रविवारकी छुट्टी खूनमें घुल-मिलकर एक हो गई है-न, रह-रहकर उसका प्रकोप प्रवल हो उठता है।"

अध्यापकने कहा, "मेरे खूनमें अब तक घुसनेका मौका ही नहीं मिला छुट्टीके 'माइक्रोब'को। पर, मैं भी आज छुट्टी लूँगा। कारण समझा दूँ। इस साल कोपेनहेगेनमें अन्तर्राष्ट्रीय मैथमेटिक्स कॉनफरेन्स होगी। मेरा नाम न-जाने कैसे उनलोगोंकी नजरमें आ गया, पता नहीं। भारतमें सिर्फ मुझे ही निमन्त्रण मिला है। इतना बड़ा मौका तो हाथसे जाने देना ठीक नहीं।"

विभा उत्साहके साथ बोली, "जरूर, आपको जाना ही होगा।"

अध्यापक जरा मुसकराते-हुए बोले, 'मेरे ऊपरवाले जो मुझे डेपुटेशनमें भेज सकते थे वे राजी नहीं हो रहे, इसलिए कि कहीं मेरा दिमाग न फिर जाय। उनकी उत्कण्ठा मेरे अच्छेके लिए ही है। फिर भी, ऐसे किसी बन्धुकी खोजमें निकलना चाहता हूँ मैं, जो बहुत-ज्यादा बुद्धिमान न हो। कर्जके बदलेमें जो-कुछ गिरवी रखनेकी आशा दे सकता हूँ उसे न तो तराजूमें तौला जा सकता है और न कसौटीपर ही घिसकर दिखाया जा सकता है। हम विज्ञानी-लोग विश्वास करनेके पहले प्रत्यक्ष प्रमाण चाहते हैं, इसी तरह अर्थ-विज्ञानी लोग भी ढूँढ़ते हैं ठोस विषय-वस्तु,– उन्हें धोखा नहीं दिया जा सकता न!"

विभा उत्तेजित होकर बोली, "कहींसे भी हो, एक बन्धु ढूँढ़ निकालूँगी ही। सम्भवतः वह खूब सयाना न होगा, उसकी आप चिन्ता न करें।"

दो-चार बातोंसे समस्याका समाधान नहीं हुआ। मात्र उस दिनके लिए आधा-परधा समाधान हो गया। अमर बाबू मझोले कदके आदमी हैं, श्यामवर्ण, शरीर दुबला-पतला, ललाट चौड़ा, माथेके सामनेकी तरफके बाल धीरे-धीरे घटते जा रहे हैं। चेहरा प्रियदर्शन है, देखनेसे मालूम होता है कि किसीसे शत्रुता करनेका अवकाश ही नहीं मिला उन्हें। आँखोंमें ठीक अन्यमनस्कता तो नहीं किन्तु दूरमनस्कता जरूर मालूम होती है, अर्थात् रास्तेमें चलते समय उन्हें सुरक्षित रखनेका दायित्व दूसरोंपर ही निर्भर है। मित्र उनके बहुत कम ही हैं, पर जो दो-एक जने हैं वे उनके सम्बन्धमें बहुत ही ऊँची आशा रखते हैं, और बाकीके जो जान-पहचानके लोग हैं वे नाक

सिकोड़कर उन्हें कहते हैं 'हाइब्राउ'। बातचीत कम करते हैं, लोग उसे समझते हैं हृद्यताकी कमी। मतलब यह कि उनकी जीवन-यात्रामें जनता बहुत कम है। और उनकी साइकॉलॉजीके लिए आरामका विषय यह है कि बाहरके लोग उन्हें क्या समझते हैं इस बातको वे जानते ही नहीं।

अभीकको देनेके लिए विभा आज जो आठ सौ रुपये चटसे निकाल लाई थी, सो केवल एक अन्ध-आवेगके वशीभूत होकर। विभाकी नियम-निष्ठापर उसके मामाका विश्वास अटल है। कभी भी उसका कोई व्यतिक्रम नहीं हुआ। विभाके मामा, सांसारिक विषयोंमें सुदक्ष होनेपर भी, इस बातकी कभी कल्पना ही नहीं कर सकते थे कि स्त्रियोंके जीवनमें नियमके प्रबल व्यतिक्रमका झटका अकस्मात् ही कहींसे आ सकता है। और इस अकस्मात् होनेवाले अ-कार्यकी सम्पूर्ण सजा और लज्जाको मनमें स्पष्टतासे देखकर ही क्षण-भरकी आँधीके झटकेमे विभाने उपस्थित किया था अपना दान अभीकके सामने। लौटाया-हुआ वह दान फिर नियमकी झोलीमें वापस आ गया है। वर्तमान क्षेत्रमें प्रेमका वह स्पर्धावेग उसके मनमें नहीं है। उसीसे स्वाधिकार लंघन करके किसीको रुपये उधार देनेकी बातको वह साहस करके अपने मनमें भी न ला सकी। इसलिए, उसने तय किया कि मासे उत्तराधिकार-सूत्रमें मिले-हुए कीमती गहनोंको बेचकर जो रुपये आयेंगे उन्हें वह अमरनाथको उपलक्ष्य करके दे देगी अपने देशको।

विभाके घरपर जिन बालक-बालिकाओंका भरण-पोषण हो रहा है, विभा उनकी पढ़ाईमें सहायता करती है। खाने-पीनेके बाद अब तक उसकी क्लास चालू थी। आज रविवार है। जल्दी छुट्टी दे दी है।

बकस निकालकर फर्शपर एक हल्की तोशक बिछाकर उसपर एक-एक करके अपने गहने सजा रही थी विभा। अपने परिवारके परिचित जौहरीको बुला भेजा है।

इतनेमें, जीनेमें अभीकके आनेकी आहट सुनाई दी। पहले तो जल्दीसे

गहने छिपा देनेकी मनमें आई, किन्तु बादमें ज्यों-के-त्यों पड़े रहने दिये। किसी भी कारणसे अभीकसे कोई भी बात छिपाना उसके स्वभावके विरुद्ध है।

अभीक घरमें घुसनेके बाद कुछ देर तक खड़ा-खड़ा देखता रहा ; समझ गया कि माजरा क्या है। बोला, "असाधारणके लिए पार-उतराईकी विध बिठा रही हो! मेरे लिए तुम हो महामाया, बहलाये रखती हो ; और अध्यापकके लिए हो तारा, तार देती हो। अध्यापक जानते हैं क्या, अबला नारी अपनी मृणाल-भुजाओंसे उन्हें पार उतारनेकी व्यवस्था कर रही है?"

"नहीं, नहीं जानते।"

"जाननेपर क्या उस वैज्ञानिकके पौरुषपर चोट नहीं पहुँचेगी?"

"क्षुद्र जनोंके श्रद्धाके दानपर महान् जनोंका अकुण्ठित अधिकार है, मैं तो इतना ही जानती हूं। उस अधिकारसे वे अनुग्रह करते हैं, दया करते हैं।"

"सो तो समझ गया। किन्तु स्त्रियोंके शरीरके गहने हम-ही-लोगोंको आनन्द देनेके लिए होते हैं, फिर चाहे हम कितने ही साधारण क्यों न हों। किसीके विलायत जानेके लिए नहीं होते, चाहे वे कितने ही बड़े क्यों न हों। हम-जैसे पुरुषोंकी दृष्टिको उन्हें तुमलोगोंने पहलेसे ही भेंट चढ़ा रखा है। यह जो चुन्नी-मोतीका हार है इसे एक दिन मैंने तुम्हारे गलेमें देखा था, जब हमारा प्रथम परिचय था बहुत-थोड़ा। उस प्रथम-परिचयकी स्मृतिमें यह हार घुल-मिलकर एक हो गया है। यह हार क्या तुम्हारा अकेलेका है, मेरा भी तो है।"

"अच्छा, इस हारको न-हो-तो तुम्हीं ले लेना।"

"तुम्हारी सत्तासे विच्छिन्न करके दिया-हुआ यह हार बिलकुल ही निरर्थक है जो! वह हो जायगा चोरीका धन। तुम्हारे साथ ही लूँगा इसे सब-समेत, यही आस लगाये बैठा हूं मैं। इस बीचमें इस हारको यदि हस्तान्तरित कर दिया तुमने, तो धोखा दोगी मुझे।"

"ये-सब गहने मेरी मा दे गई हैं, मेरे भावी-विवाहके यौतुकके लिए। विवाहको अलग करके इन गहनोंकी क्या सज्ञा दूँगी मैं? खैर, किसी शुभ या अशुभ लग्नमें इस कन्याकी सालङ्कारा मूर्तिकी आशा न करना तुम!"

"अन्यत्र वर स्थिर हो गया है मालूम होता है ?"

"हो गया है वैतरणीके तटपर। बल्कि एक काम कर सकती हूँ मैं, तुम जिससे ब्याह करोगे उस वधूके लिए अपने इन गहनोंमेंसे कुछ छोड़ जाऊँगी।"

"मेरे लिए शायद वैतरणी-तटका रास्ता बन्द है ?"

"ऐसा न कहो। सजीव पात्रियाँ-सब जकड़े-हुए हैं तुम्हारी जन्मपत्री।"

"झूठ नहीं बोलूँगा। जन्मपत्रीका इशारा बिलकुल ही असम्भव हो सो बात नही। शनिकी दशामें संगिनीका अभाव सहसा सांघातिक हो उठे तो समझ लो कि पुरुषका मृत्युयोग समुपस्थित है।"

"सो हो सकता है, किन्तु उसके कुछ समय बाद ही संगिनीका आविर्भाव ही हो उठता है सांघातिक। तब वह मृत्युयोग हो उठता है संकट, यानी जिसे कहते हैं परिस्थिति।"

"यानी जिसे कहते है 'बाध्यता-मूलक उद्‌बन्धन'। प्रसंग है तो यद्यपि हाइपैथेटिकैल, फिर भी, सम्भावनाके इतना नजदीक है कि उसपर बहस करना व्यर्थ है। इसीसे कहता हूँ कि किसी दिन जब अचानक मौर बाँधे मुझे देखोगी 'परहस्तं गतं धनम्' तब—"

"अब और मत डराओ। तब मैं भी अकस्मात् आविष्कार कर लूँगी कि 'परहस्त'का अभाव नहीं है।"

"छि छि, मधुकरी, बात तो अच्छी नही सुनाई दी तुम्हारे मुँहसे। पुरुष लोग तुमलोगोंकी 'देवी' कहकर स्तुति करते हैं, क्योंकि उनका अन्तर्धान होनेपर तुमलोग सूखकर मरनेको राजी रहती हो। पुरुषोंको भूलकर भी कोई 'देवता' नही कहता। क्योंकि अभावमें पड़ते ही बुद्धिमानोंकी तरह वे अभाव दूर करनेको तैयार रहते हैं। सम्मानके लिए यही तो परेशानी है। एकनिष्ठताकी पदवी बचानेके लिए तुमलोगोंको प्राणोंसे मरना पड़ता है। साइकॉलॉजीको अभी रहने दो, मेरा प्रस्ताव यह है कि अमर बाबूके अमरत्व-लाभका दायित्व हमलोगोंपर ही छोड़ दो न! हमलोग क्या उनका मूल्य नहीं समझते ? गहने बेचकर पुरुषको लज्जित क्यों करती हो ?"

"ऐसी बात न कहो, अभी ! पुरुषोंका यश स्त्रियोंका सबसे बड़ा धन है। जिस देशमें तुमलोग 'बड़े' हो उस देशमें हम भी धन्य हैं।"

"यह देश वही देश हो। तुमलोगोंकी तरफ देखकर यही बात सोचा करता हूं बराबर। इस प्रसंगमें मेरी बात अभी रहने दो, फिर कभी होगी। अमर बाबूकी सफलतामें ईर्षा करते हैं ऐसे क्षुद्र आदमी इस देशमें बहुत हैं। इस देशके आदमी बड़े-आदमियोंके लिए महामारी हैं। किन्तु दुहाई है तुम्हें, मुझे उन वामनोंमें न समझ लेना। सुनो, बी, मैंने कितना बड़ा एक क्रिमिनल पुण्यकर्म किया है। दुर्गा-पूजाके चन्देके रुपये मेरे हाथमें थे। वे रुपये मैंने दे दिये हैं अमर बाबूकी विलायत-यात्राके फण्डमें। और, दिये हैं बिना किसीके पूछे-गछे। जब फण्डाफोड़ होगा तब 'जीव-बलि' ढूंढ़नेके लिए माके भक्तोंको बाजारमें नहीं दौड़ना पड़ेगा। मैं नास्तिक हूं, मैं समझता हूं 'सच्ची पूजा' किसे कहते हैं। वे लोग धर्मात्मा हैं, वे क्या समझेंगे !"

"यह तुमने क्या काम किया, अभी ! तुम जिसे कहा करते हो पवित्र नास्तिक-धर्म, यह काम क्या उसके योग्य है ? यह तो विश्वासघात है।"

"मानता हूं मैं। किन्तु मेरे धर्मकी भीत किसने कमजोर कर दी थी, सुनो। बड़ी धूमधामके साथ पूजा करनेके लिए मेरे चेलोंने कमर कस ली थी। किन्तु, चन्देमें जो मामूली रकम आई वह जितनी हास्यास्पद थी उतनी ही शोकावह। उससे भोगके बकरोंमें वियोगान्त नाटक नहीं जमता, पंचमाङ्कका लाल रंग हो जाता फीका। मुझे उसमें कोई आपत्ति नहीं थी। तय किया था, हमलोग खुद ही अपने हाथसे ढोल-तासे पीटेंगे बेताला, असह्य उत्साहके साथ, और कद्दू-कुम्हड़ेके वक्ष विदीर्ण करेंगे स्वयं अपने हाथसे खड्गाघातसे। नास्तिकके लिए इतना ही यथेष्ट है, किन्तु धर्मात्माओंके लिए नहीं। न-जाने कब शामके वक्त मुझे बिना जताये ही उनमेंसे बन गया एक साधुबाबा, पांच-जने बन गये उसके चेले, और, किसी-एक धनी विधवा बुढ़ियाके पास जाकर बोले, 'तुम्हारा लड़का जो रंगूनमें काम करता है, जगदम्बाने स्वप्नमें कहा है कि यथेष्ट बकरोंकी बलि और खूब धूमधामसे पूजा न मिली

तो माता उसे समूचा ही लील जायेंगी।' बुढ़ियासे उनलोगोंने पेच कस-कसके पाँच हजार रुपये निचोड़े हैं। मैंने जिस दिन सुना, उसी दिन उस रुपयेकी सद्गति कर दी। उससे मेरी जात मारी गई, किन्तु रुपयोंका कलंक दूर हो गया। अब तुम्हें किया है मैंने अपना कॉनफेशनल। पाप स्वीकार करके पाप क्षालन कर लिया गया। पाँच हजार रुपयेके बाहर बचे हैं सिर्फ उनतीस रुपये। उन्हें रख छोड़ा है कुम्हड़ेके बाजारका कर्ज चुकानेके लिए।"

सुस्मिने आकर कहा, "बच्चू नौकरका बुखार बढ़ गया है, साथ-साथ खाँसी भी बढ़ गई है। डाक्टर साहब क्या लिख गये हैं सो देख लो जरा।"

विभाका हाथ पकड़कर अभीकने कहा, "विश्व-हितैषिणी, रोग-तापकी परिचर्या करनेमें तो तुम दिन-रात व्यस्त रहती हो, और जिन हतभाग्योंका शरीर बुरी तरह स्वस्थ है उनकी याद करनेकी फुरसत ही नहीं तुम्हें।"

"विश्व-हित नहीं, जी, किसी-एक अति-स्वस्थ भाग्यहीनको भूले रहनेके लिए ही इस तरह इतना काम बनाना पड़ता है। अब छोड़ो, मैं जाऊँ, तुम बैठो जरा,—मेरे गहनोंकी सम्हाल रखना!"

"और मेरे लोभको कौन सम्हालेगा?"

"तुम्हारा नास्तिक-धर्म।"

कितने ही दिन हुए अभीकके दर्शन ही नहीं हैं। चिट्ठी-पत्री भी कुछ नहीं मिली। विभाका मुँह सूख गया है। किसी भी काममें मन नहीं लगता उसका। उसकी चिन्ताएँ उलझ गई हैं। क्या हुआ है, क्या हो सकता है, कुछ भी तय नहीं कर पाती। दिन बीत रहे हैं पसली-तोड़ बोझके समान। उसे बार-बार यही सोच हो रहा है कि अभीक उसीपर अभिमान करके चला गया है। वह गृहत्यागी है, उसके कोई बन्धन नहीं, रूठकर लापता हो गया है। शायद अब नहीं लौटेगा। उसका मन बार-बार कहने लगा, 'रूठो मत, लौट आओ, मैं अब तुम्हें दुःख नहीं दूँगी।' अभीकका सारा लड़कपन, उसकी

अविवेचना, उसका प्यार-दुलार, उसकी जिद जितनी ही उसे याद आने लगी उतने ही आँसू झरने लगे उसकी आँखोंसे, बार-बार अपनेको पापाणी कहकर धिक्कार देने लगी वह।

इतनेमें एक चिट्ठी आई, स्टीमरकी छाप-शुदा। अभीकने लिखी है :—

जहाजका 'स्टोकर' होकर विलायत जा रहा हूँ। इंजनमें कोयला झोंकना है। कहता जरूर हूँ कि चिन्ता न करना, पर 'चिन्ता कर रही हो' जानकर अच्छा लग रहा है। इतना जताये देता हूँ कि इंजनके तापमें जलनेका मुझे अभ्यास है। जानता हूँ मैं, तुम यह कहकर नाराज होगी कि 'क्यों पाथेयका दावा नहीं किया मुझसे।' इसका एकमात्र कारण यह है कि मैं जो आर्टिस्ट हूँ, इस परिचयपर तुम्हें जरा भी श्रद्धा नहीं। यह मेरे लिए चिरदुःखकी बात है, किन्तु इसके लिए तुम्हें दोष नहीं दूँगा। मैं निश्चित-रूपसे जानता हूँ कि एक दिन उस रसज्ञ देशके गुणीजन मुझे स्वीकार कर लेंगे, जिनकी स्वीकृतिका असली मूल्य है।

अनेक मूढ़ व्यक्तियोंने मेरे चित्रोंकी अन्याय-रूपसे प्रशंसा की है। और अनेक मिथ्याचारियोंने की है छलना। तुमने मेरा मन बहलानेके लिए कभी भी कृत्रिम स्तुति नहीं की। हालाँ कि तुम्हें मालूम था कि तुम्हारी जरा-सी प्रशंसा मेरे लिए अमृत है। तुम्हारे चरित्रके अटल सत्यसे मैंने अपरिमेय दुःख पाया है, फिर भी, उस सत्यको मैंने बड़ा मूल्य दिया है। एक दिन संसार जब मेरा सम्मान करेगा तब सबसे बढ़कर सम्मान मुझे तुम्हीं दोगी, उसके साथ हृदयकी सुधा मिलाकर। जब तक तुम्हारा विश्वास असन्दिग्ध सत्य तक नहीं पहुँच जाता तब तक तुम प्रतीक्षा करोगी। इस बातको मनमें रखकर ही आज मैं दुःसाध्य-साधनाके पथपर चल दिया हूँ।

अब तक तुम्हें मालूम हो गया होगा कि तुम्हारा हार चोरी हो गया है। उस हारको तुम बाजारमें बेचने जा रही हो, यह चिन्ता मुझे किसी भी तरह सहन नहीं हुई। तुम पसलियाँ तोड़कर सेंध मारना चाहती थीं मेरी छातीमें। तुम्हारे उस हारके बदले मैं अपने चित्रोंका एक बंडल तुम्हारे गहनोंके बक्सके

पास रख आया हूँ। मन-ही-मन हँसो मत। अपने देशमें कहीं भी उन चित्रोंकी फटे-कागजोंसे ज्यादा कीमत नहीं मिलेगी। प्रतीक्षा करो, वी, मेरी मधुकरी, तुम टगाईमें नहीं रहोगी, हरगिज नहीं। अकस्मात् जैसे फावड़ेके मुँहके आगे गुप्तधन निकल आता है, मैं दावेके साथ कहता हूँ कि ठीक उसी तरह मेरे चित्रोंकी दुर्मूल्य दीप्ति सहसा निकल पड़ेगी। उसके पहले तक हँसना, कारण, सभी स्त्रियोंकी दृष्टिमें सब पुरुष बच्चे होते हैं, जिन्हें वे प्यार करती हैं। तुम्हारी स्निग्ध-कौतुककी उस हँसीको अपनी कल्पनामें भरकर लिये जा रहा हूँ मैं समुद्रके उस पार। और ले चला हूँ तुम्हारे उस मधुमय घरमेंसे एक मधुमय अपवाद। देखा है मैंने, भगवानके आगे तुम न-जाने क्या-क्या प्रार्थना किया करती हो, अबसे तुम यही प्रार्थना करना कि तुम्हारे पाससे चले आनेका दारुण दुःख किसी दिन जरूर सार्थक हो।

तुमने मन-ही-मन मुझसे कभी ईर्षा की है या नहीं, मुझे नहीं मालूम। यह बात सच है कि स्त्रियोंको मैं प्यार करता हूँ। ठीक उतना न सही, पर कमसे कम स्त्रियाँ मुझे अच्छी लगती हैं। उनलोगोंने मुझसे प्रेम किया है, और वह प्रेम मुझे कृतज्ञ बनाता है। किन्तु इतना तुम जरूर जानती हो कि वह नाहारिका-मण्डली थी ; और उसके बीचमें तुम थीं एकमात्र ध्रुवतारा। वे आभास हैं, और तुम हो सत्य। ये सब बातें सेण्टिमेण्टल-सी सुनाई देंगी। और-कोई उपाय नहीं जो, मैं कवि नहीं हूँ। मेरी भाषा कदली-वृक्षकी नावके समान है, लहरोंका धक्का लगते ही ज्यादती करने लगती है। जानता हूँ मैं कि वेदनाकी जहाँ गहराई है वहाँ गम्भीर होना जरूरी है, नहीं-तो सत्यकी मर्यादा जाती रहती है। दुर्बलता चंचल है, बहुत दफे मेरी कमजोरी देखकर तुम हँसी हो। इस चिट्ठीमें उसीका लक्षण देखकर जरा मुस्कराके तुम कहोगी, 'यह तो ठीक अपने अभीक जैसा ही भाव है।' किन्तु, अबकी बार शायद तुम्हारे मुँहपर हँसी नहीं आयेगी। तुम्हें मैं पा नहीं सका, इसके लिए मैंने बहुत ऊहापोह किया है, पर हृदयके दानमें तुम जो कंजूस हो! इसके बराबर इतना बड़ा अविचार और-कुछ हो ही नहीं सकता। असलमें, इस जीवनमें

तुम्हारे आगे मेरा सम्पूर्ण प्रकाश नहीं हो सका। और, शायद कभी होगा भी नहीं। इस तीव्र अतृप्तिने मुझे ऐसा कंगाल कर रखा है। इसीलिए, और कुछ चाहे विश्वास करूँ या न करूँ, सम्भवतः जन्मान्तरमें विश्वास करना ही पड़ेगा। तुमने स्पष्ट-रूपसे मुझे अपना प्रेम नहीं जताया, किन्तु अपनी स्तब्धताकी गभीरतासे प्रतिक्षण जो तुमने मुझे दान किया है, यह नास्तिक उसे कोई संज्ञा नहीं दे सका; कहा है, 'अलौकिक है!' इसीके आकर्षणसे किसी एक रूपसे शायद तुम्हारे साथ-साथ तुम्हारे भगवानके ही आस-पास फिरता रहा हूँ। ठीक नहीं मालूम। हो सकता है कि सब बनावटी बात हो। किन्तु हृदयमें एक गुप्त जगह है हमारे अपने ही अगोचरमें, वहाँ प्रबल आघात लगनेसे बात अपने-आप बन-बनकर निकला करती है; हो सकता है कि वह ऐसा कोई सत्य हो जिसे इतने दिनों तक स्वयं ही नहीं समझ सका।

बी, मेरी मधुकरी, संसारमें सबसे ज्यादा प्यार किया है तुम्हींको। उस प्यारकी कोई एक असीम सत्य-भूमिका है, ऐसा अगर मान लिया जाय, और उसीको अगर कहो कि वही तुम्हारा ईश्वर है, तो उनका द्वार और तुम्हारा द्वार एक ही बना रहा इस नास्तिकके लिए। फिर मैं वापस आऊँगा,—तब मेरा मत, मेरा विश्वास, अपना सब-कुछ आँख मींचकर समर्पण कर दूँगा तुम्हारे हाथमें। तुम उसे पहुँचा देना अपने तीर्थपथके शेष ठिकानेपर, जिससे बुद्धिकी बाधासे एक क्षणका विच्छेद न हो तुम्हारे साथ फिर कभी। तुमसे दूर आकर आज प्रेमकी अचिन्तनीयता उज्ज्वल हो उठी है मेरे मनमें, युक्ति-तर्कके काँटोंके घेरेको आज तुमने पार करा दिया है मुझे, आज मैं देख रहा हूँ तुम्हें लोकातीत महिमामें। अब तक समझना चाहा था बुद्धिसे, अब पाना चाहता हूँ अपने सर्वस्वसे।

तुम्हारा नास्तिक भक्त
अभीक

बंगला-रचना : आश्विन १९९६
हिन्दी-अनुवाद : श्रावण २००८

आखिरी बात

जीवनके बहते-हुए गँदले-रंगके ऊबड़खाबड़ धौंधोंके प्रवाहमें कहानी जहाँ अपना रूप धारण करती है उसके बहुत पहलेसे ही नायक-नायिकाओंका पारस्परिक परिचय-सूत्र गुँथता चला आता है। और पीछेसे उस पूर्व-कथाकी इतिहास-धाराका अनुसरण करना ही पड़ता है। इसलिए कुछ समय चाहता हूँ, यह स्पष्ट करनेके लिए कि 'मैं कौन हूँ।' किन्तु नाम-धाम छिपाना पड़ेगा। नहीं तो जान-पहचानवालोंमें जवाबदेही सम्हालते-सम्हालते नाकों दम आ जायगा। क्या नाम लूँ, यही सोच रहा हूँ। रोमाण्टिक नामकरणके द्वारा शुरूसे ही कहानीको वसन्त-रागके पंचम सुरमें नहीं बाँधना चाहता। 'नवीनमाधव' नाम शायद चल सकता है। उसके असली साँवले रंगको धो-पोंछकर किया जा सकता था 'नवारुण सेनगुप्त'; किन्तु तब वह वास्तव-सा नहीं सुनाई देता, और कहानी भी नामकी बड़ाई करके लोगोंका विश्वास खो बैठती; और, लोग समझते कि माँगा-हुआ जामेवार ओढ़कर साहित्य-सभामें नवाबी करने आया है।

मैं बंगालके क्रान्तिकारियोंमेंसे एक हूँ। ब्रिटिश-साम्राज्यकी महाकर्षण-शक्तिने अण्डमन-तटके बहुत नजदीक तक खींच लिया था मुझे। अनेक टेढ़े-मेढ़े मार्गोंसे, 'सी०आई०डी०' के फन्दोंसे बचता-हुआ, अफगानिस्तान तक चला गया था मैं। अन्तमें जा पहुँचा अमेरिका, जहाजमें खलासीके कामपर बहाल होकर। पूर्व-बंगीय जिद थी मिजाजमें। एक दिनके लिए भी भूला नहीं इस बातको कि भारत-माताके हाथ-पाँवकी हथकड़ी-बेड़ियोंपर रेती घिसनी ही होगी दिन-रात, जब तक जीवन है। किन्तु विदेशमें कुछ दिन रहनेके बाद एक बात मैं निश्चित-रूपसे समझ गया कि हमलोगोंने जिस पद्धतिसे क्रान्तिका खेल शुरू किया है, मानो वह दीवालीकी पटाकेबाजी है, उसने हमारे जले-भाग्यको जलाया ही है बार-बार, ब्रिटिशके राज-सिंहासनपर एक दाग भी नहीं पड़ा कहीं। अग्नि-शिखापर पतंगेकी अन्ध आसक्ति है

यह। दर्पके साथ जब उसमें कूदा था तब समझ ही नहीं पाया था कि उसमें इतिहासका यज्ञानल नहीं जलाया जा रहा है, जलाई जा रही हैं अपनी ही बहुतसी छोटी-छोटी चिनागिनियाँ। ठीक इसी समय युरोपीय महासमरका भीषण प्रलय-रूप अपने अति-विपुल आयोजन-समेत आँखोंके सामने दिखाई दिया मुझे ; और तब मेरे मनसे यह दुराशा कतई लुप्त हो गई कि ऐसा युगान्तर-साधक ध्वंस-यज्ञ, जिसकी हमलोगोंने कल्पना कर रखी थी, हमारे घास फूसके घरोंमें भी सम्भव हो सकता है। देखा कि समारोहके साथ आत्महत्या करने-लायक भी आयोजन नहीं हमारे घरमें। तब फिर निश्चय किया कि राष्ट्रीय दुर्गकी नींव पक्की करनी होगी पहले। और स्पष्ट समझ लिया कि अगर हम जीना चाहते हैं, तो, आदिम-युगके दोनों हाथोंमें नाखून जितने हैं उनसे लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती। इस युगमें यन्त्रके साथ यन्त्रकी करनी होगी जबरदस्त होड़। चाहे-जैसे मर मिटना आसान है ; किन्तु विश्वकर्माकी चेलागीरी करना आसान नहीं। अधीर होनेसे कोई लाभ नहीं, जड़से ही काम शुरू करना होगा ; मार्ग लम्बा है, साधना है कठिन।

दीक्षा ले ली यन्त्रविद्याकी। डेट्रायिटमें फोर्डके मोटर-कारखानेमें किसी तरह जा घुसा। हाथ पक्का रहा था, ऐसा नहीं लग रहा था कि आगे बढ़ रहा हूँ। एक दिन क्या दुर्बुद्धि हुई, सोचा कि फोर्डको अगर जरा आभास दूँ कि मेरा उद्देश्य अपनी व्यक्तिगत उन्नति करना नहीं, देशकी रक्षा करना है, तो स्वाधीनताका पुजारी अमेरिकाकी धन-सृष्टिका जादूगर शायद खुश होगा, और शायद मेरा मार्ग भी प्रशस्त कर देगा। किन्तु फोर्ड भीतर ही भीतर हँसकर बोला, 'मेरा नाम हेनरी फोर्ड है, पुराना अंग्रेजी नाम है यह। हमारे इंग्लैण्डके ममेरे भाई लोग किसी कामके नहीं ; उन्हें मैं कामका बनाऊँगा। यही संकल्प है मेरा।' मैंने सोचा था कि एक भारतीयको भी 'कामका आदमी' बनानेमें उसके उत्साह हो तो हो भी सकता है। एक बात मेरी समझमें आ गई कि रुपयेवालोंकी सहानुभूति रुपयेवालोंसे ही होती है। और फिर देखा कि वहाँ मोटरके चक्के बनानेके चक्र-पथमें शिक्षा ज्यादा आगे नहीं बढ़ सकती। इसी सिलसिलेमें और एक विषयमें आँखें खुल गईं,

देखा कि यन्त्र-विद्याकी शिक्षाके लिए और भी जड़में जाना चाहिए, यन्त्रके लिए कच्चा माल-मसाला जुटाना सीखना चाहिए। धरणीने शक्तिशालियोंके लिए एकत्र कर रखे हैं अपने दुर्गम जठरमें समस्त खनिज-पदार्थ। संसारके शक्तिशालियोंने पहले इसीपर दिग्विजय किया है। और गरीबोंके लिए है उसके ऊपरके स्तरपर फसल; हाड़ निकल आये हैं उनकी पसलियोंके, भीतरको घुस गये हैं उनके पेट। मैं जुट पड़ा खनिज-विद्या सीखनेमें। फोर्डने कहा था कि अंग्रेज किसी कामके आदमी नहीं, उसका प्रमाण मिल गया भारतवर्षमें। एक दिन हाथ लगाया था उनलोगोंने नीलकी खेतीमें, फिर लगाया चायकी खेतीमें। सिविलियनोंने दफ्तरोंमें तगमा-लुदा 'लॉ ऐण्ड आर्डर'की व्यवस्था तो कर ली, किन्तु भारतके विशाल अन्नभण्डारकी सम्पदाका वे उद्घाटन नहीं कर सके, न तो मानव-चित्तका और न प्रकृतिका। बैठे-बैठे पटसनके किसानोंका खून निचोड़ते रहे हैं। जमशेद टाटाको सलाम किया मैंने समुद्रके उस पारसे। और तय कर लिया कि अब पटाकेबाज़ीका खेल नहीं खेलूँगा। सेंध मारने जाऊँगा पातालपुरीकी पत्थरकी प्राचीरमें। माके आँचलसे लगे-रहनेवाले बूढ़े बच्चोंके दलमें शामिल होकर 'मा, मा' की ध्वनिमें मन्तर नहीं पढ़ूँगा; और अपने गरीब देशवासियोंको भूखे लाचार अशिक्षित दरिद्र ही मानूँगा। 'दरिद्र-नारायण' आदि कह-कहकर उनके नामपर मन्त्र नहीं बनाऊँगा। कम उमरमें ऐसे वचनोंका गुड्डा-गुड़ियोंका खेल बहुत खेल चुका हूँ; कवियोंके कुम्हार-घरोंमें देशकी जो पन्नी-लगी मूर्ति गढ़ी जाती है उसके सामने बैठकर बहुत आँसू बहाये हैं। किन्तु, अब नहीं, इस जाग्रत-बुद्धिके देशमें आकर वास्तवको वास्तव मानकर ही सूखी आँखोंसे कमर बाँधके काम करना सीखा है मैंने। अबकी बार देश जाकर निकल पड़ेगा यह विज्ञानी बंगाली फावड़ा लेकर कुल्हाड़ी लेकर हथौड़ा लेकर गुप्त धनकी खोजमें। कविके गद्गदकण्ठके चेले मेरे इस कामको पहचान ही न सकेंगे कि यह 'देशमाताकी पूजा' है।

फोर्डके कारखानेसे निकलकर उसके बाद नौ साल बिताये मैंने खनिज-विद्या सीखनेमें। युरोपके नाना केन्द्रोंमें घूमा हूँ, और अपने हाथसे काम करके

प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त किया है। दो-एक यन्त्र खुद भी बनाये हैं, उसमें उत्साह दिया है अध्यापकोंने। अपनेपर विश्वास हो गया है, और धिक्कार दिया है भूतपूर्व मन्त्रमुग्ध अकृतार्थ अपनेको।

मेरी छोटी कहानीके साथ इन-सब बड़ी-बड़ी बातोंका कोई खास सम्बन्ध नहीं है; छोड़ देनेसे भी चल जाता, शायद अच्छा ही होता। किन्तु इस सिलसिलेमें और भी एक बात कहनेकी जरूरत है, उसे कहता हूँ। यौवनके आरम्भमें नारी-प्रभावके 'मैग्नेटिज्म' से जीवनके मेरु-प्रदेशके आकाशमें जब 'अरोरा' की रंगीन पताका आन्दोलन होता रहता है तब मैं था अन्यमनस्क, बिलकुल कमर-बाँधे अन्यमनस्क। 'मैं संन्यासी हूँ' 'मैं कर्मयोगी हूँ', इन सब वाणियोंसे मनका अर्गल कसके लगा रखा था। कन्या-दाय-ग्रस्त गृहस्थगण जब मेरे आसपास चक्कर लगाने लगे तो मैंने उनसे साफ-साफ ही कह दिया था कि 'कन्याकी जन्मपत्रीमें यदि अकालवैधव्य-योग हो, तभी उन्हें मेरी बात सोचनी चाहिए।'

पाश्चात्य देशोंमें नारी-सङ्गसे बचावके लिए कोई मेड़ या दीवार नहीं है। वहाँ मेरे लिए दुर्योगकी विशेष आशंका थी। 'मैं पुरुष हूँ' यह बात देशमें रहते-हुए नारियोंके मुँहसे आँखोंकी भाषाके सिवा और-किसी भाषामें सुननेकी सम्भावना नहीं थी, इसीसे यह तथ्य मेरी चेतनाके बाहर पड़ा था। विलायत जाकर ज्योंही मैंने आविष्कार किया कि साधारण लोगोंकी तुलनामें मेरी बुद्धि ज्यादा है त्योंही यह ताड़ लिया गया कि मैं देखनेमें भी अच्छा हूँ। अपने स्वदेशी पाठकोंके मनमें ईर्षा पैदा करने-लायक बहुत-सी कहानियोंकी भूमिका दिखाई दी थी, किन्तु मैं हलफ उठाकर कहता हूँ कि मैंने उनके हाव-भावके जादूमें अपने मनको कतई जमने नहीं दिया। हो सकता है कि मेरा स्वभाव कड़ा हो और पश्चिम-बंगालके शौकीनोंके समान भावुकताकी तरीसे आर्द्रचित्त भी मैं न होऊँ; कारण, अपनेको पत्थरका सन्दूक बनाकर मैंने उसमें अपने सङ्कल्पको बाँध रखा था। और फिर, लड़कियोंके साथ रसका खेल शुरू करके उसके बाद मौका देखकर खेल खतम कर देना, यह भी मेरे स्वभावके विरुद्ध था। मैं निश्चित जानता था कि जिस जिदको लेकर मैं अपने व्रतके आश्रयमें

जीवित हूँ, एक कदम फिसलते ही उस जिदको लेकर ही मुझे अपने खण्डित व्रतके नीचे पिसकर मर जाना होगा। मेरे लिए इन दोनोंके मध्य बचाव या धोखाधड़ीका कोई रास्ता नहीं था। इसके सिवा मैं जन्मसे ही गाँवका गँवार हूँ, स्त्रियोंके सम्बन्धमें मेरा पुराना सङ्कोच मिटना ही नहीं चाहता। यही वजह है कि जो लोग स्त्रियोंके प्रेमके सम्बन्धमें अहङ्कार करते हैं उनकी मैं अवज्ञा करता हूँ।

मुझे विदेशी अच्छी डिग्री ही मिली थी। किन्तु यह जानकर कि यहाँ वह डिग्री सरकारी काममें नहीं आयेगी, छोटे-नागपुरके एक चन्द्रवंशी राजाके यहाँ, मान लो कि चण्डवीर सिंहके दरबारमें, काम करने लगा। सौभाग्यसे उनके पुत्र देविकाप्रसाद कुछ दिन केम्ब्रिजमें पढ़ आये थे। दैवसे उनके साथ मुलाकात हो गई थी ज़ुरिकमें, और वहाँ मेरी ख्याति पहुँच गई थी उनके कानों तक। उन्हें मैंने अपना प्लान समझा दिया था। सुनकर वे बहुत उत्साहित हुए थे। यहाँ आनेपर उन्होंने मुझे अपने स्टेटमें जियॉलॉजिकल सर्वेके काममें लगा दिया। ऐसा काम किसी अंग्रेजको न देनेसे ऊपरी स्तरका वायुमण्डल विक्षुब्ध हो गया था। किन्तु देविकाप्रसाद थे जिद्दी आदमी और मिजाज भी था कड़ा। वृद्ध राजाका मन डगमगानेपर भी मैं टिक गया।

यहाँ आनेके पहले माने मुझसे कहा, "बेटा, अच्छा काम मिल गया है, अब ब्याह कर लो। मेरी बहुत दिनोंकी कामना पूरी हो जायेगी।" मैंने कहा, "यानी, अच्छे कामको मैं मिट्टी कर दूँ। मेरा जो काम है उसके साथ ब्याहका ताल नहीं मिलेगा।" मेरा दृढ़ सङ्कल्प था,—माका अनुनय व्यर्थ हो गया। यन्त्र-तन्त्र सब बाँध-बूँधकर चल दिया जङ्गल-जङ्गल घूमने।

अबकी बार मेरी देशव्यापी कीर्ति-सम्भावनाके भावी दिगन्तमें सहसा जो कहानी फूट निकली उसमें ठक्कका चेहरा भी है और शुक्र-ताराका भी। नीचेके पत्थरोंसे प्रश्न करता-हुआ मिट्टीकी खोजमें घूम रहा था जङ्गल-जङ्गल। पलाश-फूलके रंगीन नशेमें तब आकाश था विभोर। शाल-वृक्षोंमें मञ्जरियाँ लग रही थीं, और उनपर मधुमक्खियोंके झुण्ड मड़रा रहे थे। व्यवसायीगण जो संग्रह करनेमें जुट पड़े हैं। बेरके पत्तोंपरसे वे इकट्ठा कर

रहे हैं तसर-रेशमके कोए। सन्थाल लोग बीन रहे हैं महुआ-फल। झरझर कलकल-शब्द करती-हुई हलके नाचका दुपट्टा-सा घुमाकर बहती चली जा रही है हरकरे बदनकी नदी। मैंने उसका नाम रखा था 'तनिका'। यह कारखाना नहीं, कॉलेजका क्लास भी नहीं; यह तो उस सुख-तन्द्राका धुँधले प्रदोषका राज्य है जहाँ मानव-मनको अकेला पा जानेपर प्रकृति-मायाविनी उसपर रंगरेजिनका काम करने लगती है, जैसे वह सूर्यास्तके पटपर करती है।

मेरे मनपर जरा आवेशका रंग चढ़ गया था। मन्थर हो आई थी मेरे कामकी चाल। अपने ऊपर नाराज हुआ था, और भीतरसे जोर लगा रहा था पतवारपर; मनमें सोच रहा था, ट्रॉपिकल आब-हवाकी मकड़ीके जालमें फँस गया शायद। शैतान 'ट्रॉपिक्स' इस देशमें जन्मसे ही अपने हाथ-पंखोंकी हवासे हारका मन्त्र चला रही है हमारे खूनमें। बचना होगा उसके पसीनेसे भींगे जादूसे।

दिन डूबनेको है। एक जगह, बीचमें रेतीका टापू छोड़कर, नदी दो भागोंमें विभक्त होकर बह रही है। उस रेतीके टापूपर स्तब्ध-हुई बैठी है बगुलोंकी पंक्ति। दिनान्तके समय रोज यह दृश्य मुझे इशारा किया करता है अपने कामसे मुँह मोड़नेके लिए। झोलीमें पत्थर-मिट्टीके नमूने लेकर मैं जा रहा था बंगलेकी तरफ, वहाँकी लैबोरेटरीमें परीक्षा करनेके लिए। अपराह्न और सन्ध्याके बीच दिनका जो फालतू हिस्सा है पड़ती-जमीनके समान, अकेले आदमीके लिए उससे बचकर चलना कठिन है, खासकर निर्जन वनमें। इसीसे मैंने उस समयको लगा दिया है पत्थर-मिट्टीकी परखके काममें। डाइनामोसे बिजली-बत्ती जला लेना और केमिकेल माइक्रोस्कोप स्केल वगैरह लेकर बैठ जाता। किसी-किसी दिन रातके बारह-एक तक बज जाते। आज मेरी खोजमें एक जगह 'मैंगनिज' का लक्षण-सा पकड़ाई दिया था। इसलिए बड़े उत्साहके साथ तेजीसे मैं बंगलेकी तरफ जा रहा था। कौए मेरे सरके ऊपरसे गेरुआ-रंगके आकाशमें काँव-काँव करते-हुए अपने नीड़ोंकी तरफ जा रहे थे।

ठीक इसी समय अकस्मात् बाधा आ पड़ी मेरे कामपर लौटनेमें। पाँच शाल-वृक्षोंका एक व्यूह-सा था जंगलके एक टीलेके ऊपर। उस वेष्टनीमें कोई बैठा हो तो उसे सिर्फ एक सँधमेंसे देखा जा सकता था, सहसा निगाह चूकनेकी ही सम्भावना अधिक थी। उस दिन मेघोंमेंसे एक आश्चर्यकारी दीप्ति फटी पड़ रही थी। वनके उस शाल व्यूहकी सँधकी छायाके भीतरका रंगीन आलोक ऐसा लगता था जैसे दिगङ्गनाके आँचलेमें-बँधी स्वर्ण-रेणु बिखर पड़ी हो। उस आलोकके बीचमें बैठी-हुई है एक तरुणी ; पेड़के तनेसे पीठ टेके, दोनों पैर छातीके पास सिकोड़कर एकाग्र चित्तसे कुछ लिख रही है अपनी डायरीमें। क्षण-मात्रमें मेरे आगे प्रकट हो उठा एक अपूर्व विस्मय। जीवनमें ऐसी घटना दैवसे ही घटती है क्वचित्-कभी। पूर्णिमाकी ज्वारके समान मेरे हृदय-तटपर धक्का देने लगी उस विस्मयकी लहरें।

एक पेड़की ओटमें खड़ा-खड़ा देखता रहा उस दृश्यको, एक आश्चर्यमयी चित्र-सा चिह्नित होने लगा मेरे मनके चिरस्मरणीय-आगारमें। मेरे अपने विस्तृत अनुभव-पथपर मेरा मन बहुत बार अप्रत्याशित मनोहरके द्वारके पास जा-जाकर रुका है, मैं कतराकर निकल गया हूँ, किन्तु आज ऐसा मालूम हुआ कि शायद मैं जीवनके किसी चरम संस्पर्शमें आ पहुँचा हूँ। इस तरह सोचना और इस तरह कहना मेरे लिए कतई अभ्यस्त नहीं। जिस आघातसे मनुष्यका चिन-जाना एक अपूर्व स्वरूप हुड़का खोलकर बाहर निकल पड़ता है वह आघात मुझे लगा कैसे ? अपनेको मैं शुरूसे जानता हूँ कि मैं पहाड़के समान ठोस हूँ, मजबूत हूँ। और आज, भीतरसे उछल उठा झरना!

तबीयत चाहती थी कि कुछ बात करूँ, किन्तु मनुष्यके साथ सबसे बड़ी बातचीत करनेके लिए पहला शब्द क्या होना चाहिए, मैं सोचकर तय न कर सका। एक वाणी है क्रिश्चियन पुराणमें, प्रथम सृष्टिकी वाणी, 'प्रकाश जाग उठे, अव्यक्त हो उठे व्यक्त।' क्षण-भरके लिए ऐसा लगा कि वह लड़की, उसका असल नाम बादमें मालूम हो गया था, किन्तु उसे मैं व्यवहारमें न लाऊँगा, मैंने उसका नाम रखा है 'अचिरा'। मानी क्या ? मानी यही कि जिसका प्रकाश होनेमें विलम्ब नहीं हुआ, बिजलीके समान। रहा यही नाम। — हाँ-तो, उस

लड़कीका मुँह देखकर ऐसा लगा कि उसे मालूम पड़ गया है कि कोई खड़ा है पेड़की ओटमें। उपस्थितिकी कोई नीरव ध्वनि है शायद। लिखना बन्द कर दिया है उसने, किन्तु उठते नहीं बन रहा ; इस डरसे कि भागना कहीं बहुत ज्यादा स्पष्ट न हो जाय। एक बार सोचा कि कहूँ 'माफ कीजियेगा', किन्तु क्या माफ करे, क्या अपराध है, क्या कहूँ उससे ? कुछ अलग जाकर विलायती नाटी कुदालसे मिट्टी खोदनेका बहाना बनाया, झोलीमें कुछ भरा, बिलकुल फालतू चीज। उसके बाद झुककर जमीनपर विज्ञानी दृष्टि फेरता-हुआ चल दिया। किन्तु इतना मैं निश्चयसे कह सकता हूँ कि जिसे मैंने धोखा देनेके लिए इतना किया उसने जरा भी धोखा नहीं खाया। मुग्ध पुरुष-चित्तकी कमजोरियोंके और-भी अनेक प्रमाण उसे और-भी बहुत बार मिल चुके हैं, इसमें सन्देह नहीं। फिर भी मैंने आशा की कि मेरे विषयमें उसने मन-ही-मन कुछ आनन्द ही पाया होगा। इससे तो बल्कि आड़को और भी जरा लाँघ जाता तो,— तो क्या होता, क्या मालूम। नाराज होती या नाराजीका अभिनय करती ? अत्यन्त चंचल मन लेकर चला जा रहा था बंगलेकी ओर, इतनेमें सहसा निगाह पड़ गई फटे-हुए एक लिफाफेके दो टुकड़ोंपर। इसे जिऑलॉजिकल नमूना नहीं कहा जा सकता। फिर भी उठाकर देखने लगा। पता लिखा था, 'भवतोष मजुमदार, आई०सी०एस०, छपरा।' स्त्रीके हाथकी लिखावट है। टिकट लगे-हुए थे, पर डाकखानेकी छाप नहीं थी। मानो कुमारीकी दुविधा हो। मेरी विज्ञानी बुद्धि ठहरी, स्पष्ट समझ गया कि इस फटे-हुए लिफाफेमें एक ट्रैजिडीका क्षतचिह्न है। पृथिवीके फटे-स्तरोंमेंसे उसके विप्लवका इतिहास ढूँढ़ निकालना हमारा काम है। मेरे सन्धान-पटु हाथोंने उसी क्षण उस फटे लिफाफेका रहस्य आविष्कार करनेका संकल्प कर डाला।

अब सोच रहा हूँ, अपने अन्तःकरणके अभूतपूर्व रहस्यके विषयमें। किसी एक विशेष अवज्ञाके संस्पर्शसे आदमीके मनकी भाव-धारा कैसा नवीन रूप लेकर प्रवाहित होने लगती है, अबकी बार उसके परिचयसे विस्मित हो गया। अब तक, जो मन नाना कठिन अध्यवसाय लिये-हुए शहरोंमें जीवनका लक्ष्य ढूँढ़ता फिरा है उसीको स्पष्ट-रूपसे जान सका था। सोचा था कि वही मेरा

वास्तविक स्वभाव है ; उसके आचरणके स्थायित्वके विषयमें मैं हलफ उठा सकता था। किन्तु उसमें बुद्धि-शासनसे बहिर्भूत जो एक गूढ़ छिपा-हुआ था उसे आज मैंने पहले-पहल ही देखा। पकड़ाई दे गया अरण्यक, जो युक्तिको नहीं मानता किन्तु मोहको मानता है। वनकी एक माया है, पेड़-पौधोंका निःशब्द षड़यन्त्र, आदिम प्राणकी मन्त्रध्वनि। दिन-दहाड़े झंकृत होता है उसका उदात्त स्वर, गहरी रातमें गूँजती रहती है उसकी मन्द्र-गम्भीर ध्वनि, जीव-चेतनामें होता रहता है उसका गुञ्जन, आदिम प्राणकी गूढ़ प्रेरणा बुद्धिको कर देती है आविष्ट।

जिऑलॉजीकी चर्चामें ही भीतर-ही-भीतर इस अरण्यक मायाका काम चल रहा था। ढूँढ़ रहा था रेडियमके कण, कंजूस पत्थरोंकी मुट्ठीमेंसे किसी तरह अगर निकाला जा सके। किन्तु दिखाई दी अचिरा, कुसुमित शालवृक्षके छायालोकके बन्धनमें। इसके पहले भी मैंने भारतीय नारीको देखा है, निस्सन्देह। किन्तु सब-कुछसे अलग इस तरह एकान्त-रूपसे देखनेका मौका नहीं मिला। यहाँ उसकी श्यामल देहकी कोमलतामें वनके वृक्ष लता और पत्तोंने अपनी भाषा मिला दी है। विदेशिनी रूपवतियाँ तो बहुत देखी हैं, और वे बहुत अच्छी भी लगी हैं। किन्तु भारतीय तरुणीको मानो यहाँ पहले-पहल देखा, जिस जगह उसे सम्पूर्ण-रूपसे देखा जा सकता है। इस निभृत वनमें वह नाना परिचित-अपरिचित-वास्तवके साथ घुल-मिलकर एक नहीं हुई है। देखकर ऐसा नहीं लगता कि वह वेणी हिलाती-हुई डायोशिनमें पढ़ने जाती है, या बेथुन-कालेजकी डिग्री-धारिणी है, अथवा बालीगंजकी टेनिस-पार्टीमें उच्च-कलहास्यके साथ चाय-बिस्कुट परोसती है। बहुत दिन पहले बचपनमें हारू ठाकुर और राम बसुके गीत सुने थे मैंने, और उन्हें भूल भी चुका था ; वे गीत आजकल रेडिओमें नहीं बजाते और न ग्रामोफोनमें बजकर मुहल्लेको ही मुखरित करते हैं। किन्तु, मालूम नहीं क्यों, आज ऐसा लगा कि अचिराके रूपकी भूमिका मानो उन्हीं गीतोंकी सहज रागिणीमें है। 'याद रहेगी, सखी, हियकी व्यथा'—इस गीतके सुरमें जो एक करुण चित्र है वह आज रूप लेकर मेरी आँखोंके सामने स्पष्ट उद्भासित हो उठा।

यह भी सम्भव हुआ। कैसे प्रबल भूमिकम्पमें पृथ्वीके नीचे छिपी-हुई आग्नेय सामग्री ऊपर आ जाती है, सो जिऑलॉजी-शास्त्रमें पढ़ चुका हूँ; और आज अपनेमें देखा, नीचे दबी-हुई अन्धकारकी तप्त-विगलित वस्तुको सहसा ऊपर के आलोकमें। कठोर विज्ञानी नवीनमाधवके अटल अन्तःस्तरमें ऐसे उलट-फेरकी मैंने कभी भी आशा नहीं की थी।

अब समझ रहा हूँ, पहले जब मैं रोज शामको उस रास्तेसे अपने कामसे लौटता था तो यह मुझे देखती थी, अन्यमनस्क मैंने उसे नहीं देखा। विलायत जानेके बादसे अपने चेहरेपर मुझे कुछ गर्व-सा हो गया है। 'ओ, हाउ हैण्डसम!' इस प्रशस्तिकी कानाफूसीका मैं आदी हो गया था। किन्तु विलायतसे लौटे-हुए अपने किसी-किसी मित्रसे मैंने सुना है, 'बंगाली लड़कियों की रुचि ही भिन्न है, पुरुषोंके रूपमें वे मुलायम स्त्रैण रूप ही ढूँढती हैं।' बंगालमें एक कहावत भी है, 'कार्तिक-सा चेहरा'। बंगाली कार्तिक और जो-भी कुछ हों, देव-सेनापति हरगिज नहीं। पैरिसमें एक बान्धवीके मुँहसे सुना था, "विलायती सफेद रंग तो 'रंगका अभाव' है, अरिएण्टलके शरीरपर गरम आकाश जो रंग चढ़ा देता है वह सचमुचका रंग है, वह छायाका रंग है, वह रंग हमलोगोंको अच्छा लगता है।" यह बात शायद बङ्गोपसागरके तटके लिए नहीं लागू होती। आज तक ये सब बातें मेरे मनमें उठी ही नहीं। इधर कई दिनोंसे मेरे मनको ऐसी ही बातें घेरे रहती हैं। घाममें जला-हुआ रंग है मेरा, दुबली-पतली लम्बी प्राणसार देह है, कड़ी भुजाएँ हैं, तेज मेरी गति है; सुना है, दृष्टि मेरी तीक्ष्ण है, नाक ठोड़ी ललाट आदिको मिलाकर सुस्पष्ट सबल चेहरा है मेरा। विलायतके एक कलाकारने मेरी पत्थरकी मूर्ति गढ़नी चाही थी, किन्तु मैं समय न दे सका। बंगालियोंको मैं 'माके लाल' ही समझता हूँ, और माताएँ भी अपने गोदके-धनको मोमकी पुतलीके रूपमें ही देखना पसन्द करती हैं। ये-सब बातें मेरे मनमें उथलपुथल मचाकर मुझे गुस्सा दिला रही थीं। अपनी कल्पनामें पहलेसे ही मैंने झगड़ा करना शुरू कर दिया था अचिराके साथ। उससे कह रहा था, 'तुम जिसे कहती हो सुन्दर, वह विसर्जनका देवता है। तुम्हारी स्तुति जरूर मिलती

है उसे, किन्तु टिकता नहीं वह ज्यादा दिन।' कह रहा था, 'मैं बड़े-बड़े देशोंमें स्वयंवर-सभाकी वरमालाओंकी उपेक्षा कर आया हूँ, और, तुम मेरी उपेक्षा करोगी!' जबरदस्तीका यह बनावटी झगड़ा इतना लड़कपन था कि एक दिन हँस उठा था अपनी तुनक-मिजाजीपर। इधर विज्ञानीकी युक्तियाँ काम कर रही थीं भीतर-ही भीतर। अपने मनको समझाता, 'यह भी तो एक जबरदस्त बात है, मेरे जाने-आनेके रास्तेके किनारे वह बैठी क्यों रहती है! एकान्त निर्जनता ही अगर उसे पसन्द है, तो जगह बदल लेनी।' पहले-पहल मैंने उसे कनखियोंसे देखा है, 'देखा ही नहीं' इस ढलसे। इधर कभी-कभी स्पष्ट निगाहें मिली हैं; किन्तु जहाँ तक मैं समझता हूँ, उसने उसे चार आँखें होना नहीं समझा है।

इससे भी बढ़कर एक परीक्षा हो चुकी है। इसके पहले, दिनमें अपना पत्थर-मिट्टीका काम खतम करके शामके पहले उस पञ्चवटीके रास्तेसे मात्र एक बार मैं घर लौटता था। फिलहाल यानायातकी पुनरावृत्ति भी होने लगी है। यह घटना जियॉलॉजीसे कोई सम्बन्ध नहीं रखती, इतना समझने-लायक उमर हो गई है अचिराकी। मेरा भी साहस बढ़ चला, जब देखा कि मेरा यह सुस्पष्ट भावका आभास भी उस तरुणीको स्थानच्युत नहीं कर सका। किसी-किसी दिन सहसा मैंने पीछेकी तरफ मुड़कर देखा है कि अचिरा मेरे तिरोगमनकी ओर देख रही है, और मेरी दृष्टि पड़ते ही उसने अपनी निगाह डायरीपर झुका ली है। सन्देह हुआ, शायद उसकी डायरी-लिखनेकी धारामें पहले-जैसा वेग नहीं है। मेरी विज्ञानी बुद्धिमें मनोरहस्यकी आलोचना जाग उठी। मैं समझ गया कि उसने किसी-एक पुरुषके लिए तपस्याका व्रत लिया है, उसका नाम है भवतोष, और वह छपरामें मैजिस्ट्रेटी कर रहा है विलायतसे लौटनेके बादसे। उसके पहले देशमें रहते-हुए इन दोनोंका प्रणय था गभीर, किन्तु कामपर लगते ही कोई-एक आकस्मिक विप्लव हो गया है। बात क्या है, पता लगाना चाहिए। कोई कठिनाई नहीं हुई, क्योंकि पटना-विश्वविद्यालयमें मेरा एक केम्ब्रिजका साथी है बङ्किम।

मैंने उसे चिट्ठी लिखी कि 'बिहार सिविल सर्विसमें कोई भवतोष

मजुमदार है, उसके विषयमें कन्या-पक्षवालोंमें जनश्रुति सुनी है कि वह सत्पात्र है। मेरे एक मित्रने मुझसे अनुरोध किया है कि मैं उनकी कन्याके लिए उसे प्रजापतिके फन्देमें फँसानेमें उनकी सहायता करूँ। रास्ता साफ है या नहीं, आद्यन्त संवाद लेकर मुझे लिखो। और उसकी मतिगति कैसी है, सो भी लिखना।'

जवाब आया : "रास्ता बन्द है। और उसकी मतिगतिके सम्बन्धमें अब भी अगर कुतूहल बाकी हो, तो सुन लो—

"कालेजमें पढ़ते समय मैं डाक्टर अनिलकुमार सरकारका छात्र था। एल्फाबेटके बहुतसे अक्षर उनके नामके पीछे लगे थे, जैसा उनमें असाधारण पाण्डित्य था वैसी ही बच्चों-जैसी सरलता। उनके घरका एकमात्र उजाला उनकी दोहती को अगर देखो, तो मालूम होगा कि उसकी साधनापर प्रसन्न होकर सरस्वती केवल उसके बुद्धिलोकमें ही आविर्भूत नहीं हुई, अपना रूप भी ले आई हैं अपनी गोदमें। शैतान भवतोष घुस पड़ा उनके स्वर्गलोकमें। बुद्धि उसकी तीक्ष्ण है और बोलता है अनर्गल। पहले तो अध्यापक मुग्ध हुए, फिर मुग्ध हो गई उनकी दोहती। उनलोगोंकी असह्य अन्तरङ्गता देखकर हमलोगोंके हाथ सुरसुराने लगे। कुछ कहनेका उपाय नहीं था, सगाई पक्की हो चुकी थी, सिर्फ देर थी विलायत जाकर सिविल-सर्विसमें उत्तीर्ण हो आनेकी। उसकी विलायतकी पढ़ाईका खर्च जुटाना पड़ा था अध्यापकको। भवतोषको सरदी बहुत मानती थी। हमलोगोंने सुबह-शाम दोनों वक्त भगवानसे प्रार्थना करनी शुरू कर दी कि वह न्युमोनियामें मर जाय। किन्तु मरा नहीं, पास कर गया। पास करनेके बाद ही भारत-सरकारके एक उच्चपदस्थ मुरब्बीकी लड़कीसे ब्याह कर लिया। लज्जासे क्षोभसे अध्यापक अपना काम छोड़कर मर्माहत लड़कीको लेकर कहीं अन्तर्धान हो गये, कुछ पता नहीं छोड़ गये।"

चीट्ठी पढ़ ली। और दृढ़ सङ्कल्प कर लिया कि इस लड़कीका उद्धार करना ही है मर्मान्तिक लज्जासे, जीवनके शोचनीय अवसादसे।

इस बीचमें अचिराके साथ किसी तरह बात करनेके लिए भीतरसे मेरा

जी फड़फड़ाने लगा। यदि मैं विज्ञानी न होकर होता कहीं साहित्य-रसिक, या पूर्ववङ्गीय न होकर होता पश्चिम-वंगीय आधुनिक, तो हरगिज मेरा मुँह इस तरह बन्द नहीं रहता। किन्तु, बंगाली लड़कीसे डर लगता है, शायद पहचानता नहीं इसलिए। मेरी एक धारणा थी कि हिन्दू-नारी अपरिचित परपुरुष-मात्रके लिए बिलकुल ही अनधिगम्य है। खामखा अगर मैं बात करने जाऊँ तो उसके रक्तमें लग जायगी अशुचिता। संस्कार ऐसा ही अन्धा होता है। यहाँ काममें लगनेके पहले कुछ दिन तो मैं कलकत्तेमें बिता ही आया था; और नाते-रिश्तेदारोंके यहाँ देख आया था सिनेमा-मञ्च-पथचारिणी गफ्तारी-रंगसे रंगीन आधुनिकाओंको, और जो बान्धवी-जातकी हैं उनके,—खैर जाने दो उनकी बात। किन्तु, अचिराका कोई परिचय पाये बिना ही ऐसा मालूम हुआ कि इसकी जात ही अलग है,—आधुनिक कालके बाहर खड़ी है वह अपनी निर्मल आत्म-मर्यादामें, स्पर्श-कातर लड़की-सी। मन-ही-मन बार-बार सोचता रहा, कैसे इससे बात शुरू की जाय।

इस बीचमें आसपास दो-एक डकैती हो गई थीं। सोचा कि इसी विषयमें अचिरासे कहूँ, 'राजासे कहकर आपके लिए पहरेका इन्तजाम करा दूँ।' अंग्रेज लड़की होती तो शायद इस बिन-चाही अनुकूलताको हिमाकत ही समझती; और गरदन टेढ़ी करके कहती, 'यह मेरे सोचनेकी बात है।' किन्तु बंगाली लड़की बातको किस रूपमें लेगी, इसका मुझे कोई अनुभव ही नहीं। लम्बे समयसे बंगालके बाहर रहते-रहते मेरे मनका अभ्यास बहुत-कुछ घुल-मिल गया है विलायती संस्कारके साथ।

दिनका उजाला करीब खतम करनेको है। अब अचिराका घर लौटनेका समय हो गया। या फिर उसके नाना लेने आयेंगे। इतनेमें सहसा मैं क्या देख रहा हूँ कि कोई बदमाश अचिराके हाथसे हैण्डबैग और डायरी छीनकर भागा जा रहा है। उसी क्षण मैं पेड़ोंकी ओटमेंसे निकलकर अचिरासे बोला, "डरिये मत आप।" और झपटकर उस बदमाशके कंधोंपर जा पड़ा। बैग और डायरी छोड़कर वह भाग खड़ा हुआ। मैंने लूटका माल ले जाकर अचिराको सम्हला दिया। अचिरा बोली, "भाग्यसे आप—"

मैंने कहा, 'मेरी बात न कहिये, मेरे ही भाग्यसे वह बदमाश आया था।'

"इसके मानी ?"

"इसके मानी यह कि उसीकी मददसे आपसे मेरी प्रथम वार्ता हो गई। इतने दिनोंसे किसी भी तरह मैं तय नहीं कर पा रहा था कि कैसे आपसे बातचीत शुरू करूँ।"

"पर, वह तो डाकू था।"

"नहीं, डाकू नहीं, वह था मेरा बरकन्दाज।"

अचिरा अपनी कत्थई-रंगकी साड़ीका पल्ला मुँहसे लगाकर खिलखिलाकर हँस पड़ी। अहा, कैसी मीठी ध्वनि है, मानो निर्झरके स्रोतमें गोल-गोल कंकड़ियोंका सुरीला गान हो।

हँसी रुकनेपर वह बोली, "किन्तु सचमुच वह डाकू होता तो बड़ा मजा होता।"

"मजा होता किसके लिए ?"

"जिसे लेकर डकैती है उसके लिए। ऐसी एक कहानी पढ़ी है मैंने कहीं।"

"उसके बाद उद्धारकर्ताका क्या होता ?"

"उसे घर ले जाकर चाय पिला दी जाती।"

"और इस नकली उद्धारकर्ताका क्या होगा ?"

"उसे तो किसी चीजकी जरूरत नहीं। उसने तो सिर्फ बातचीत करनेकी पहली बात चाही थी, सो उसे मिल चुकी है दूसरी तीसरी चौथी पाँचवीं बात।"

"गणितकी संख्याएँ अकस्मात् निबट तो नहीं जायेंगी ?"

"निबटेंगी क्यों ?"

"अच्छा, आप होतीं तो मुझसे पहली बात क्या करतीं ?"

"मैं होती तो कहती, वन-जंगलोंमें कंकड़-पत्थरोंसे क्यों खेला करते हैं आप, आपकी क्या उमर नहीं हुई है ?"

"कहा क्यों नहीं ?"

"डर लगता था।"

"डर? मुझसे डर?"

"आप जो बड़े-आदमी ठहरे। नानाजीसे सुन चुकी हूँ मैं। उन्होंने आपके लेख विलायती अखबारोंमें पढ़े हैं। वे जो-कुछ पढ़ते हैं उसे मुझे भी समझानेकी कोशिश करते हैं।"

"मेरा लेख भी समझाया था क्या?"

"हाँ, कोशिश तो की थी। किन्तु उसमें लैटिन-नामोंके पहरेका समारोह देखकर मैंने उनसे हाथ जोड़कर कहा था, नानाजी, इसे रहने दो, इससे तो बल्कि मैं तुम्हारी 'कोयण्टम-थियोरी' की किताब ले आऊँ तो अच्छा।"

"उसे आप शायद समझ लेती हैं?"

"जरा भी नहीं। किन्तु मेरे नानामें ऐसा एक बद्ध संस्कार बैठा-हुआ है कि सभी लोग सब-कुछ समझ सकते हैं; और उनकी उस धारणाको तोड़ना मुझे अच्छा नहीं लगता। उनकी और-एक आश्चर्यकी धारणा है कि स्त्रियोंकी सहज-बुद्धि पुरुषोंसे बहुत ज्यादा तीक्ष्ण होती है। इसलिए अब डर लग रहा है कि 'टाइम-स्पेस'-सम्बन्धी व्याख्या मुझे जरूर सुननी पड़ेगी। दरअसल बात यह है कि लड़कियोंपर उनकी करुणाकी सीमा नहीं। नानी जब जिन्दा थीं तब कोई गम्भीर बात छेड़ते ही वे उनका मुँह बन्द कर देती थीं। इससे स्त्रियोंकी तीक्ष्ण बुद्धि कहाँ तक पहुँच सकती है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण नानीसे उन्हें नहीं मिला। मैं उन्हें हताश नहीं कर सकती। सुना बहुत है, समझा नहीं है; और भी बहुत सुनूँगी; और समझूँगी कुछ भी नहीं।"

अचिराकी दोनों आँखें कौतुक-स्नेहसे चमक उठीं। मेरा जी चाहने लगा कि यह बातचीत जल्दी खतम न हो तो अच्छा है। दिनका उजाला म्लान हो आया। सन्ध्याके प्राथमिक तारे जल उठे हैं शाल-वनके माथेपर। सन्थाल स्त्रियाँ ईंधन संग्रह करके घर लौट रही हैं, दूरसे सुनाई दे रहा है उनके गीतका गुञ्जन।

इतनेमें बाहरसे आवाज आई, "अची, कहाँ हो तुम ? अँधेरा हो चला जो। आजकल समय अच्छा नहीं है।"

"बिलकुल अच्छा नहीं, नानाजी ! इसीसे आज मैंने एक रक्षक नियुक्त किया है।"

अध्यापकजीके आते ही मैंने उन्हें प्रणाम किया पाँव छूकर। वे अत्यन्त चपल हो उठे। मैंने परिचय दिया, "मेरा नाम है नवीनमाधव सेनगुप्त।"

वृद्ध प्रोफेसरका चेहरा उज्ज्वल हो उठा। बोले, "अच्छा, आप ही हैं डाक्टर सेनगुप्त ? आप तो अभी लड़के ही हैं।"

मैंने कहा, "जी हाँ, बिलकुल लड़का हूँ, मेरी उमर छत्तीससे ज्यादा नहीं।"

फिर अचिरा पहलेकी तरह कल-मधुर कण्ठसे हँस उठी, और उसने मेरे मनमें दूने लयकी झंकारसे सितार बजा दिया। बोली, "मेरे नानाके आगे संसारके सभी लोग बच्चे हैं, और नानाजी हैं सब बच्चोंके अग्रवाल।"

आध्यापक बोले, "अग्रवाल ? यह नया शब्द कहाँसे आविष्कार किया ?"

"था-न तुम्हारा एक प्यारा छात्र कुन्दनलाल अग्रवाल। मुझे ला दिया करता था बोतलोंमें भर-भरकर आमकी चटनी। मैंने उससे पूछा था 'अग्रवाल' शब्दके मानी क्या हैं। उसने बताया था 'पायोनियर'।"

अध्यापकने कहा, "डाक्टर सेनगुप्त, आपसे परिचय तो हो ही गया, अब आपको हमारे यहाँ आना होगा।"

अचिरा बीच ही में बोल उठी, "कुछ कहनेकी जरूरत नहीं, नानाजी ! आनेके लिए ये फड़फड़ा रहे हैं ; मुझसे ये सुन चुके हैं कि देश-कालके गमीर तत्त्वोंका गट्ठर लेकर उनकी तुम व्याख्या किया करते हो आइन्स्टाइनके कंधोंपर चढ़ाकर।"

मैं मन-ही-मन बोला, 'हद है, यह कैसी शरारत !'

अध्यापक अत्यन्त उत्साहित होकर बोल उठे, "आप 'टाइम-स्पेस' के सम्बन्धमें —"

मैं घबराकर बोला, "जी नहीं, मैं 'टाइम-स्पेस' के सम्बन्धमें कुछ नहीं जानता। मुझे समझायेंगे तो आपका समय व्यर्थ ही नष्ट होगा।"

अध्यापक व्यग्र होकर बोले, "समय! समयकी यहाँ क्या कमी है। अच्छा, एक काम कीजिये-न, आज हमारे ही यहाँ भोजन कीजियेगा, क्यों ठीक है-न?"

मैं उछलकर कहने-ही-वाला था, 'हाँ, हाँ।'

अचिरा बीच ही में बोल उठी, "नानाजी, तुम्हें क्या मैं यों ही कहती हूँ, बच्चे हो? तुम जब-है-तब लोगोंको निमन्त्रण देकर मुझे परेशानीमें डाल देते हो। इस दण्डकारण्यमें 'फरपो' की दूकान कहाँसे मिलेगी? ये लोग विलायतको डिनर-खोर जातके सर्वग्रासी आदमी ठहरे। क्यों तुम अपनी दोहतीको बदनाम कराते हो। कमसे कम भेटकी-मछली और भेड़की व्यवस्था तो करनी ही पड़ेगी।"

"अच्छा अच्छा।—तो कब आपको सहूलियत होगी बताइये?"

"सहूलियत मुझे कल ही हो सकती है। किन्तु अचिरा देवीको मैं संकटमें नहीं डालना चाहता। घोर जंगल-पहाड़-गुफाओंमें मुझे घूमना पड़ता है। साथमें रखता हूँ थैला भरकर चूड़ा, केले, टमाटर, चनेका कच्चा साग, और कभी-कभी मूँगफली भी। मैं अपने साथ ले आऊँगा फलाहारका सामान। अचिरा देवी अपने हाथसे दही-चूड़ा मिलाकर मुझे खिला देंगी। इसपर यदि राजी हों, तो कोई बात ही नहीं।"

"नहीं, नानाजी, विश्वास न करना इन-सबोंका। तुमने एक मासिकपत्रमें लेख लिखा था-न, 'बंगालके खाद्यमें विटामिनका प्रभाव', उसे इन्होंने पढ़ा है, इसीसे तुम्हें सिर्फ खुश करनेके लिए चूड़ा-केलोंकी सूची सुना दी है।"

मैंने सोचा, अच्छी मुसीबतमें डाला। किसी भी मासिकपत्रमें डाक्टरका लिखा-हुआ विटामिन-तत्त्वका लेख पढ़ना मेरे लिए कभी भी सम्भव नहीं। लेकिन यह कबूल भी कैसे करूँ, खासकर जब कि ये प्रसन्न होकर मुझसे पूछ बैठे, "आपने उसे पढ़ा है क्या?"

मैंने कहा, "पढ़ूँ या न पढ़ूँ, उससे कुछ नहीं, असल बात यह है कि—"

"असल बात यह है कि ये निश्चित जानते हैं, कल अगर इन्हें खिलाया जाय तो पशु-पक्षी स्थावर-जङ्गम कुछ भी बचेगा नहीं इनकी थालीमें पड़नेसे।

इसीलिए इतनी निश्चिन्ताईसे टमाटरका नाम-कीर्तन कर रहे हैं ये। इनके शरीरकी तरफ देखो-न जरा,–'सिर्फ शाकाहारसे बना' कोई कह सकता है! नानाजी, तुम सभीपर बहुत ज्यादा विश्वास कर बैठते हो, यहाँ तक कि मुझपर भी। इसीलिए हँसीमें भी तुमसे कुछ कहनेकी हिम्मत नहीं पड़ती।"

बात करते-हुए धीरे-धीरे हमलोग उनके घरकी तरफ चले जा रहे थे। इतनेमें अचिरा सहसा बोल उठी, "अब आप जाइये अपने बंगलेमें।"

"क्यों, मैंने सोचा था कि आपलोगोंको घरके दरवाजे तक पहुँचा दूँगा।"

"घर अभी यों ही पड़ा-हुआ है। फिर आप कहेंगे, बंगाली स्त्रियोंको घर सँवारनेका सलीका ही नहीं। कल ऐसा सँवारके रखूँगी कि मेम-साहबकी याद आयेगी।"

अध्यापकने कहा, "आप कुछ खयाल न कीजियेगा, डाक्टर सेन-गुप्त, अची बात ज्यादा कर रही है, पर, इसका स्वभाव नहीं ऐसा। यहाँ अत्यन्त निर्जनता होनेसे ही यह भरा-भरा बनाये रखती है मेरे मनको अपनी अनर्गल बातोंसे। यहाँ ऐसा अभ्यास हो गया है इसका। जब यह चुप रहती है तब घरमें सन्नाटा छा जाता है, और मेरे मनमें भी। इसे मालूम है यह बात। मुझे डर लगता रहता है कि कहीं कोई इसे गलत न समझ ले।"

वृद्धके गलेसे लिपटकर अचिरा कहने लगी, "समझने दो न, नानाजी! अत्यन्त अनिन्दनीया नहीं होना चाहती मैं। वह अत्यन्त अनइण्टरेस्टिंग हो जायगा।"

अध्यापक गर्वके साथ बोल उठे, "जानते हैं, डाक्टर सेनगुप्त, मेरी अची बात करना जानती है। ऐसी लड़की मैंने नहीं देखी कहीं।"

"तुमने ऐसी लड़की नहीं देखी, तो मैंने ऐसे नाना भी नहीं देखे।"

मैंने कहा, "आचार्य देव, आज विदा होनेके पहले आपको एक वचन देना होगा मुझे।"

"अच्छी बात है।"

"आप जितनी बार मुझे 'आप' कहते हैं, मन-ही-मन मुझे जीभ दबानी पड़ती है दाँतों-तले। अगर आप मुझे 'तुम' कहें, तो वही मेरे लिए यथार्थ

स्नेह और सम्मानका सूचक होगा। आपके घर मुझे तुम-श्रेणीमें ग्रहण करनेमें आपकी दोहती भी सहायता करेगी।"

"हद हो गई! मैं मामूली दोहती ठहरी, सहसा इतना ऊँचा हाथ कैसे पहुँचेगा मेरा, आप बड़े आदमी ठहरे! मेरा कहना है, और-कुछ दिन जाने दीजिये। अगर भूल सकूं आपके डिग्री-धारी रूपको, तो सब-कुछ सम्भव हो सकता है। पर नानाजीकी बात अलग है। अभी शुरू कर दो-न, नानाजी, बोलो-न, 'तुम कल यहाँ खाने आना। अची अगर मछलीके झोरमें नमक ज्यादा डाल दे, तो भले-आदमीकी तरह सहन कर लेना, और कहना, वाह, बना तो खूब है, और भी जरा लेना पड़ेगा।"

अध्यापकने स्नेहके साथ मेरे कँधेपर हाथ रखते-हुए कहा, "भाई, और कुछ दिन पहले अगर हमारी अचीको देखते-न, तो समझ जाते कि असलमें इसका कितना लाजुक स्वभाव है। इसीलिए, जब यह बात करना कर्तव्य समझती है तब उसपर जोर लगनेकी वजहसे बातें ज्यादा हो जाती हैं।"

"देख रहे हैं, डाक्टर सेनगुप्त, नानाजी मुझपर कैसा मधुर शासन करते हैं। मानो इक्षुदण्डसे। अनायास ही कह सकते थे कि 'तुम बड़ी मुखरा हो, तुम्हारी प्रगल्भता अत्यन्त असह्य है!' आप लेकिन मेरा डिफेण्ड किया कीजियेगा। क्या कहियेगा, कहिये-न?"

"आपके मुँहके सामने नहीं कहूँगा।"

"ज्यादा कठोर होगा?"

"आप जानती हैं मेरे मनकी बात।"

"तो रहने दीजिये। अब घर जाइये।"

"एक बात बाकी है। कल आपलोगोंके यहाँ जो निमन्त्रण है सो मेरे नये नामकरणके लिए है। कलसे मेरे नाममेंसे 'डाक्टर' और 'सेनगुप्त' लुप्त हो जायेगा। सूर्यके पास जाने-आनेसे धूमकेतुकी जैसे पूँछ उड़ जाती है।"

"तो-नामकीर्तन कहिये, नामकरण क्यों कहते हैं?"

"अच्छा, वही सही।"

यहीं समाप्त हो गया मेरा पहला बड़ा-दिन।

"मेरा काम जो भारतवर्षका है। और वह केवल विज्ञानका ही हो सो बात नहीं।"

"अर्थात् प्रेमकी सफलता आप-जैसे साधकोंके लिए कामनाकी वस्तु नहीं। स्त्रियोंके जीवनका चरम लक्ष्य होता है व्यक्तिगत और आपलोगोंका है नैर्व्यक्तिक।"

इसका जवाब सहसा दिमागमें नहीं आया। मुझे चुप रहते देख अचिरा कहने लगी, "बंगला साहित्य शायद आप नहीं पढ़ते। 'कच और देवयानी' नामकी एक कविता है। उसमें यही बात है कि स्त्रियोंका मत है पुरुषको बाँधना और पुरुषोंका मत है इस बन्धनको काटकर परलोकका रास्ता बनाना। कच निकल पड़ा था देवयानीका अनुरोध न मानकर; और आप निकल आये हैं माका अनुनय न मानकर। एक ही बात है। स्त्री-पुरुषके इस चिरकालके द्वन्द्वमें आप जयी हुए हैं। जय हो आपके पौरुषकी। रोने दीजिये स्त्रियोंको, उस क्रन्दनका नैवेद्यके रूपमें भोग ग्रहण कीजिये अपनी पूजामें। देवताके लिए चढ़ता है नैवेद्य, किन्तु देवता रहते हैं निरासक्त।"

अध्यापकने इस बातचीतके मूल लक्ष्यको नहीं समझा। गर्वके साथ बोले, "अचीके मुँहसे गम्भीर सत्य बिना-कोशिशके ऐसा सुन्दर ढंगसे प्रकट होता है कि बाहरके लोग सुनकर यही समझेंगे —"

उन्हें बराबर यही डर लगा रहता है कि बाहरके लोग उनकी नातिनीको गलत न समझ बैठें।

अचिराने कहा, "बाहरवालोंकी बात तुम मत सोचा करो, नानाजी! स्त्रियोंकी 'छोटे-मुँह बड़ी-बात' उनसे सही नहीं जाती, उनकी प्रवीणता उन्हें अखर जाती है। तुम मुझे सही समझो, बस इतना ही काफी है मेरे लिए।"

अचिरा बहुत बड़ी बात भी कह जाती है हँसी-हँसीमें, किन्तु आजकी इसकी गम्भीरता देखने-लायक थी। किन्तु मैंने भी एक बातका अन्दाजा लगा लिया कि भवतोषने जरूर उसे समझाया होगा कि वह जो भारत-सरकारके उच्च-गगनके ज्योतिर्लोकसे बधू लाया है उसका भी लक्ष्य बहुत ऊँचा है और निःस्वार्थ है। ब्रिटिश राष्ट्र-शासनके भण्डारसे ही वह शक्ति संग्रह कर

सकेगा देशके काममें लगानेके लिए। किन्तु इतना आसान नहीं अचिराको धोखा देना। वह उसकी बातोंमें नहीं आई, इस बातका प्रमाण रह गया है उस द्विखण्डित चिट्ठीके लिफाफेमें।

अचिराने फिर कहा, "देवयानीने कचको क्या अभिशाप दिया था, जानते हैं?"

"नहीं?"

"कहा था, 'तुम अपनी ज्ञान-साधनाके फलको स्वयं नहीं भोग सकोगे, दूसरोंको दान कर देना पड़ेगा।' मुझे यह बात कुछ ऊटपटांग ही जची। अगर ऐसा अभिशाप आज देता कोई युरोपको, तो वह जी जाता। विश्वकी चीजको अपनी चीजकी तरह काममें लानेसे ही वे लोभकी मार खाकर मर रहे हैं। —सच है या नहीं, बताओ तो, नानाजी?"

"बिलकुल सच है। किन्तु आश्चर्य इस बातका है कि तुमने यह बात सोची कैसे!"

"अपने गुणसे कतई नहीं। ठीक ऐसी ही बात तुमसे सुन चुकी हूँ कई बार। तुममें एक महान गुण है, भोलानाथ हो तुम, कब क्या कह जाते हो सब भूल जाते हो। फिर चोरीके मालपर अपनी छाप लगाकर चलानेमें किसीको कोई डर ही नहीं रहता।"

मैंने कहा, "चोरी-विद्या बड़ी विद्या है। क्या विद्यामें और क्या राष्ट्रमें, बड़े-बड़े सम्राट बड़े-बड़े चोर हैं। असल बात यह है कि टुटपुँजिया वे ही हैं जो छाप मारनेके पहले ही पकड़ जाते हैं।"

अचिराने कहा, "इनके कितने ही छात्रोंने इनकी कही-हुई बातें नोट कर-करके किताब लिखकर नाम कमा लिया है। बादमें ये खुद ही उनकी किताब पढ़कर प्रशंसा करते हैं। जान ही नहीं पाते कि अपनी प्रशंसा अपने-आप ही कर रहे हैं। मेरे भाग्यसे ऐसी प्रशंसा मुझे अकसर मिला करती है। नानाजी, नवीन बाबूसे पूछ देखो-न। पूछते ही ये कबूल कर लेंगे कि मेरी ऑरिजिनलिटीकी बात इन्होंने अपनी नोटबुकमें लिखना शुरू कर दिया है, जिसमें ये माच-प्रस्तर-युगकी जरूरी बातें लिख रखते हैं। याद है, नानाजी,

बहुत दिनोंकी बात है, तब तुम कालेजमें थे, तुमने मुझे 'कच और देवयानी' कविता सुनाई थी। उस दिनसे मैं पुरुषके उच्च गौरवको मन-ही-मन मानती आई हूँ, किन्तु कभी मुँहसे स्वीकार नहीं किया।"

"किन्तु, बेटी, अपनी किसी बातमें मैंने स्त्रियोंका गौरव नहीं घटाया।"

"तुम घटाओगे! तुम तो स्त्रियोंके अन्ध भक्त हो, तुम्हारे मुँहसे स्तवगान सुनकर मन-ही-मन हँसा करती हूँ मैं। स्त्रियाँ निर्लज्ज होकर सब मान लिया करती हैं। सस्तेमें प्रशंसा हड़प जाना उनकी आदतमें शुमार है।"

उस दिन यह जो बातचीत हो गई वह बिलकुल ही हास्यालाप हो सो बात नहीं। उसमें थी युद्धकी सूचना। अचिराके स्वभावकी दो दिशाएँ थीं, और उसके थे दो आश्रय, एक घरमें और दूसरा पंचवटीमें। अचिराके साथ जब मेरा काफी सहज-सम्बन्ध हो आया तब मैंने निश्चय किया कि उस पंचवटीके निभृत-एकान्तमें हास्य-कौतुकके बहाने अपने जीवनके सब-सङ्कटकी बात मैं छेड़ूँगा और उसे अन्तिम निर्णयकी ओर ले जाऊँगा जैसे भी हो। किन्तु वहाँ रास्ता ही बन्द पाया। हमारे परिचयके प्रथम दिवसमें प्रथम वार्ता जैसे मेरी जबानपर नहीं आई उसी तरह वहाँ जो अचिरा है उसके पास प्रथम वार्ता नहीं थी। मुकाबलेमें उसके मनकी चरम बातपर पहुँचनेका कोई उपाय ढूँढ़े नहीं मिला। उसके घरके पास तो उसकी सहास्य-मुखरता रोक देती है मेरी तरफकी अग्रगतिको, मुझसे फिर एक कदम भी उठाते नहीं बनता; और उसकी निर्जन-निभृत वनच्छायाने मेरे सम्पूर्ण चाञ्चल्यको रोक रखा है निर्वाक् निःशब्दतासे। किसी-किसी दिन इनलोगोंके यहाँ चायकी निमन्त्रण-सभाके एक कोनेमें मन खोलनेका मौका मिलता है, और अचिरा समझ जाती है कि मैं विपद्-मण्डलके आसपास आ रहा हूँ, उसी दिन उसके वाक्य-वर्षणकी अविरलता अस्वाभाविक-रूपसे बढ़ जाती है, फिर जरा भी कहीं सँध नहीं मिलती, और आब-हवा भी हो उठती है प्रतिकूल। मेरा मन हो गया है अत्यन्त अशान्त, और काममें बाधा ऐसी आ रही हैं कि मैं लज्जित होता रहता हूँ भीतर-ही-भीतर। सदरमें होनेवाली बजटकी मीटिंगमें मेरे रिसर्च-विभागके लिए और भी कुछ रुपये मंजूर करा लेनेका प्रस्ताव उपस्थित

है, उसकी भी समर्थक-रिपोर्ट अब तक आधेसे ज्यादा नहीं लिखी गई है। इस बीचमें क्रोचकी एस्थेटिक्सके सम्बन्धमें आलोचना कुछ दिनसे रोज सुनता आ रहा हूँ। विषय सम्पूर्णतः मेरी उपलब्धि और उपभोगके बाहरका है। अचिरा इस बातको निश्चित-रूपसे जानती है। किन्तु अपने नानाको वह उत्साहित करती रहती है और खुद मन-ही-मन हँसती रहती है। फिलहाल Behaviourism के सम्बन्धमें जितनी विरुद्ध युक्तियाँ हैं उनकी व्याख्या चल रही है। इस तत्त्वालोचनाकी शोचनीयता यह है कि अचिरा उस समय छुट्टी लेकर चली जाती है बगीचेके कामसे ; और कह जाती है, 'यह सब तर्क मैं पहले ही सुन चुकी हूँ।' मैं मोंदूकी तरह बैठा रहता हूँ, और बीच-बीचमें दरवाजेकी तरफ देखा करता हूँ। सुविधाकी बात इतनी है कि अध्यापक कभी पूछते नहीं कि तत्त्वकी कोई दुरूह ग्रन्थि मेरी समझमें आ रही है या नहीं। वे समझते हैं कि सब-कुछ मैं स्पष्ट समझ रहा हूँ।

किन्तु, अब तो रहा नहीं जाता। कहीं कोई छिद्र पाते ही असल बात छेड़ ही देनी है। पिकनिकके किसी अवकाशमें अध्यापक जब खंडहर मन्दिरकी सीढ़ियोंपर बैठे नवीन-केमिस्ट्रीकी नई-प्रकाशित पुस्तक पढ़ रहे थे, तब, नाटे आबनूसके पेड़के नीचे बैठी अचिरा सहसा मुझसे कह उठी, "इस चिरकालके वनमें जो एक अन्ध-प्राणकी शक्ति है, क्रमशः मैं उससे डरने लगी हूँ।"

मैंने कहा, "आश्चर्य है, ठीक ऐसी ही बात उस दिन मैंने अपनी डायरीमें लिखी है।"

अचिरा कहती गई, "पुरानी इमारतकी किसी सँधमेंसे पीपलका अंकुर निकल आता है चुपके-चुपके, फिर अपनी जड़ोंसे वह इमारतको जकड़ लेता है, यह भी ठीक वैसा ही है। नानाजीके साथ इसी विषयको लेकर बात हो रही थी। उन्होंने कहा, 'लोकालयसे दूर बहुत दिन एकान्तमें रहनेसे मानव मन प्रकृतिके प्रभावसे दुर्बल होता रहता है, और प्रबल हो उठता है आदिम प्राण-प्रकृतिका प्रभाव।' मैंने पूछा, 'ऐसी हालतमें क्या करना चाहिए।' उन्होंने कहा, 'मनुष्यके चित्तको तो हम अपने साथ ले ही सकते हैं,— भीड़की अपेक्षा निर्जनतामें ही उसे हम अधिकतासे पा सकते हैं,—मेरी किताबोंको ही

देखो।' नानाजीके लिए यह कहना आसान है, किन्तु सबके लिए तो एक ही दवा कारगर नहीं होती। आपकी क्या राय है?'

मैंने कहा, "अच्छा, बताता हूँ। मेरी बातको आप ठीक तौरसे समझ देखियेगा। मेरा मत यह है कि ऐसी जगह किसी ऐसे आदमीका संग सम्पूर्णतः भीतर-बाहर मिलना चाहिए जिसका प्रभाव मानव-प्रकृतिको परिपूर्ण बनाके रख सके। जब तक ऐसा नहीं होता तब तक अन्ध-शक्तिके आगे बराबर हार ही खानी पड़ेगी। आप अगर साधारण स्त्रियों-जैसी होतीं, तो आपके आगे स्पष्टरूपसे सच बात कहनेमें अन्त तक संकोच बना ही रहता।"

अचिराने कहा, "कहिये आप, दुविधा न कीजिये।"

मैंने कहा, "मैं सायन्टिस्ट हूँ, जो बात करना चाहता हूँ उसे इम्पर्सनल तौरपर ही कहूँगा। आपने किसी समय भवतोषसे बहुत ज्यादा प्रेम किया था। अब भी क्या आप उन्हें उतना ही चाहती हैं?"

"अच्छा, मान लीजिये, उतना ही चाहती हूँ।"

"मैं ही आपके मनको हटा लाया हूँ।"

"सो हो सकता है, किन्तु अकेले आप ही नहीं, मनके भीतरकी भीषण अन्ध-शक्ति भी उसमें शामिल है। इसीलिए मैं इस 'हट-आने'की श्रद्धा नहीं करती, बल्कि स्वयं लज्जा पाती हूँ।"

"क्यों नहीं करतीं श्रद्धा?"

"दीर्घकालके प्रयाससे मनुष्य चित्त-शक्तिसे अपने आदर्शको गढ़ता है, और प्राण-शक्तिकी अन्धता उसको तोड़ती है। आपकी तरफ मेरा जो प्रेम है वह उसी अन्ध-शक्तिके आक्रमणसे।"

"प्रेमका आप इस तरह तिरस्कार कर रही हैं नारी होकर?"

"नारी होनेसे ही कर रही हूँ। प्रेमका आदर्श हमारे लिए पूजाकी वस्तु है। उसीका नाम है सतीत्व। सतीत्व एक आदर्श है। यह चीज *अरण्य-प्रकृतिकी नहीं, मानवीकी है। इस निर्जनतामें इतने दिनोंसे उसी* आदर्शकी मैं पूजा कर रही थी, समस्त आघात और सम्पूर्ण वंचनाके होते-हुए भी। उसकी रक्षा न कर सकी तो मेरी शुचिता जाती रहेगी।"

"आप श्रद्धा कर सकती हैं भवतोषपर ?"

"नहीं।"

"उसके पास जा सकती हैं ?"

"नहीं। किन्तु भवतोष और मेरा उस जीवनका प्रेम दोनों एक वस्तु नहीं। अब मेरे लिए वह प्रेम इम्पर्सनल है। उसके लिए किसी आधारकी जरूरत नहीं।

"ठीक समझ नहीं पा रहा हूँ।"

"आप नहीं समझ सकेंगे। आपलोगोंकी सम्पदा है ज्ञानकी,– उच्चतर शिखरपर वह ज्ञान इम्पर्सनल है। स्त्रियोंकी सम्पदा है हृदयकी, उसका अगर सब-कुछ खो जाय,– जो-कुछ बाह्य है, देखनेमें आता है, छूनेमें आता है, भोग करनेमें आता है,– तो भी बाकी रह जाता है उसका प्रेमका वह आदर्श जो 'अवाङ्मनसोगोचरः' है। अर्थात् इम्पर्सनल।"

"देखिये, बहस करनेका समय अब नहीं रहा। इधरके अखबारोंमें अपने देखा होगा शायद, मेरा यहाँका काम समाप्त हो गया है। असिस्टैण्ट जियॉलॉजिस्ट लिख रहे हैं कि यहाँसे और भी कुछ दूर खोजका काम शुरू करना होगा, किन्तु –"

"गये क्यों नहीं ?"

"आपके मुँहसे –"

"मेरे मुँहसे अन्तिम बात सुनना चाहते हैं, पहली बात पहले ही वसूल कर चुके हैं शायद ?"

"हाँ, यही बात है।"

"तो बात साफ-साफ ही कर दूँ। अपनी उस पंचवटीमें बैठकर आपके अगोचरमें कुछ समय तक आपको देखा है मैंने। दिन-भर परिश्रम किया है, कड़ी धूपकी परवाह नहीं की,–कोई जरूरत नहीं हुई आपको किसीके संगकी। एक-एक दिन ऐसा लगा है कि आप हताश हो गये हैं, जिसे पानेका निश्चय किया था उसे आप पा नहीं सके। किन्तु फिर भी उसके दूसरे दिनसे फिर अक्लान्त मनसे धूल-मिट्टी-पत्थर खोदे ही जा रहे हैं। बलिष्ठ देहको वाहन

अध्यापक हतबुद्धि-से होकर अचिराके मुँहकी तरफ देखते रह गये। अचिरा बोली, "अच्छा, मैं समझ गई। तुम सोच रहे हो, मेरी क्या गति होगी। मेरी गति तुम हो। भोलानाथ, मुझे अगर तुम नहीं चाहते, तो नानी-दि-सैकेण्डकी तलाश करो। अपनी लाइब्रेरी बेचकर गहने बनवा देना उनके लिए, फिर मैं दूँगी लम्बी दौड़। अत्यन्त अहङ्कार न बढ़ गया हो तो यह बात तुम्हें माननी ही पड़ेगी कि मेरे बिना एक दिन भी तुम्हारा काम नहीं चल सकता। मेरी अनुपस्थितिमें १५ आश्विनको तुम १५ अक्टोबर समझने लगते हो; और, जिस दिन अपने किसी सहयोगी अध्यापकको निमन्त्रण देकर घर बुलाते हो उसी दिन लाइब्रेरी-रूमका दरवाजा बन्द करके कोई निदारुण इक्वोएशन करने लग जाते हो। गाड़ीमें बैठकर ड्राइवरको ऐसा ठिकाना बताते हो कि आज तक जहाँ कोई मकान ही नहीं बना। नवीन-बाबू समझते होंगे कि मैं अत्युक्ति कर रही हूँ।"

मैंने कहा, "बिलकुल नहीं। कुछ दिनसे तो मैं भी देख रहा हूँ, उसीसे असन्दिग्ध समझ गया हूँ कि आप जो कह रही हैं सो सत्य है।"

अध्यापक बोले, "आज ऐसी-असगुनकी बातें तुम्हारे मुँहसे क्यों निकल रही हैं। – जानते हो, नवीन, इस तरह ऊटपटांग बकनेका उपसर्ग इधर ही कुछ दिनोंसे दिखाई देने लगा है इसमें।"

"सब उपसर्ग अपने-आप शान्त हो जायँगे,– तुम पलके जमो तो सही अपने आसनपर। नाड़ी फिर वापस आ जायेगी,– बिलकुल बन्द हो जायगी बायकी बकवास।"

अध्यापकने मेरी तरफ गौरसे देखते-हुए कहा, "तुम्हारी क्या राय है, नवीन?"

स्वयं विद्वान होनेसे ही उनकी जियोलॉजिस्टकी बुद्धिपर इतनी श्रद्धा है। मैं कुछ देर स्तब्ध रहकर बोला, "अचिरा देवीसे बढ़कर सच्ची सलाह आपको और कोई भी नहीं दे सकता।"

अचिरा उसी क्षण उठ खड़ी हुई, और पाँव छूकर उसने मुझे प्रणाम किया। मैं संकुचित होकर पीछे हट गया।

अचिराने कहा, "संकोच न कीजिये, आपकी तुलनामें मैं कुछ भी नहीं हूँ। यह बात किसी दिन स्पष्ट हो जायगी। आज यहीं अन्तिम विदा लेती हूँ। जानेके पहले अब शायद भेंट नहीं होगी।"

अध्यापक आश्चर्यचकित होकर बोले, "यह कैसी बात, बेटी!"

"नानाजी, तुम बहुत-कुछ जानते हो, फिर भी बहुतसे विषयोंमें तुमसे मेरी बुद्धि बहुत ज्यादा है। विनयके साथ इस बातको स्वीकार कर लो।"

मैंने पदधूलि लेकर प्रणाम किया आचार्यको। उन्होंने मुझे छातीसे लगाकर कहा, "मैं जानता हूँ, सामने तुम्हारे कीर्तिका पथ प्रशस्त है।"

यहीं पर मेरी यह छोटी-कहानी खतम होती है। इसके बादकी बात जियॉलॉजिस्टकी है।

घर जाकर मैं अपने कामके नोट्स् और रेकार्ड निकालकर देखने लगा। मनमें सहसा एक विशद आनन्द जाग उठा। मैं मन-ही-मन बोला, 'इसीको कहते हैं मुक्ति।' शामको दिनका काम पूरा करके बरंडेमें जा बैठा। ऐसा लगा जैसे पिंजड़ेसे तो निकल आया है पक्षी, किन्तु पाँवमें है जञ्जीरका एक टुकड़ा। हिलने-डुलनेमें वह जञ्जीर बज-बज उठती है।

बंगला-रचना : अगहन १९९६
हिन्दी-अनुवाद : श्रावण २००८

लैबोरेटरी

१

नन्दकिशोर थे लन्दन-युनिवर्सिटीके पास-शुदा इञ्जीनियर। साधुभाषामें, जिसे कहा जा सकता है देदीप्यमान छात्र, अर्थात् ब्रीलियन्ट, वही थे वे। स्कूलसे लेकर अन्त तक परीक्षाके प्रत्येक तोरणपर वे थे प्रथमश्रेणीके सवार।

उनकी बुद्धि थी विशद, और आवश्यकताएँ थीं उदार, किन्तु पूँजी थी तंग-मापकी।

रेल्वे कम्पनीके बड़े-बड़े पुल बनानेके काममें उनका प्रवेश हो गया था। इस काममें आय-व्ययमें चढ़ाव-उतार खूब होता है, किन्तु दृष्टान्त साधु नहीं। इस काममें जब वे दाहना और बाँया दोनों हाथ ही जोरोंसे चला रहे थे तब उनके मनमें कोई खटका नहीं था। इसमें सब कामोंका डेन-लेन 'कम्पनी' नामक किसी-एक ऐब्सट्रैक्ट सत्ताके साथ सम्बन्धित होनेसे किसी व्यक्तिगत लाभ-नुकसानकी तहवील तक उसकी पीड़ा नहीं पहुँचती।

उनके अपने काममें मालिक लोग उन्हें 'जीनियस' कहते थे, त्रुटि-हीन हिसाब फैलानेमें उनका दिमाग अच्छा काम करता था। भारतीय होनेसे ही योग्य पारिश्रमिक उन्हें नहीं मिला। नीचे दरजेके विलायती कर्मचारी पैन्टकी भरी जेबोंमें हाथ डालकर पैर फैलाकर जब उन्हें 'हैलो मिस्टर मलिक' कहके सम्बोधित करते और पीठपर हथेली थपथपाकर अपना मालिकपन जाहिर

कारखानेके दाग-शुदा कपड़े बदलनेका समय नहीं था उनके पास। कोई मजाक उड़ाता तो कह देते, 'मजूर-महाराजके तगमे-शुदा यही मेरी पोशाक है।'

किन्तु वैज्ञानिक संग्रह और परीक्षाके लिए विशेष-रूपसे मकान बनाया था उन्होंने बहुत बड़ा। इतने मशगूल थे अपने शौकमें कि लोगोंकी कानाफूसी उनके कान तक पहुँचती ही न थी, 'इतनी बड़ी आसमान-फोड़ इमारत! अलादीनका चिराग, अब तक यह था कहाँ!'

कोई शौक जब आदमीके सर हो जाता है तो उसके लिए वह शराबका नशा-सा हो जाता है, होश ही नहीं रहता कि लोग उसपर शक कर रहे हैं। असलमें नन्दकिशोर आदमी कुछ अजीब ही थे, विज्ञानकी सनक सवार थी उनके सरपर। वैज्ञानिक यन्त्रोंके सूचीपत्रोंके पन्ने उलटते-उलटते सहसा उनका सम्पूर्ण प्राण-मन कुरसीके हत्थोंको पकड़कर झकझोर डालता था। जर्मनी और अमेरिकासे वे ऐसे क़िमती-कीमती यन्त्र मँगाया करते जो भारतके बड़े-बड़े विश्वविद्यालयोंमें भी नहीं मिलते। इस विद्या-लोभीके मनमें यही तो थी वेदना। इस खाक देशमें ज्ञानके भोजमें उच्छिष्ट लेकर सस्ती पत्तलें परोसी जाती हैं। विलायतमें बड़े-बड़े यन्त्र व्यवहारका जो मौका मिलता है, हमारे देशमें उनकी कोई व्यवस्था न होनेसे ही यहाँके लड़कोंको पाठ्य-पुस्तकोंके सूखे पन्नोंमें पड़ी सिर्फ़ निस्सार जूठनसे ही पेट भरना पड़ता है। नन्दकिशोर सतर होकर बुलन्द आवाजमें कहा करते, 'शक्ति है हमारे दिमागमें, पर, जेबमें ताक़त नहीं।' 'लड़कोंके लिए विज्ञानकी बड़ी सड़क खोल देनी होगी काफी चौड़ी करके।' – यही था उनका प्रण।

बहुमूल्य यन्त्र जितने ही संगृहीत होने लगे, उनके सहकर्मियोंका धर्मबोध उतना ही असह्य हो उठा। ऐसे समयमें उन्हें सङ्कटके मुँहसे बचाया बड़े साहबने। नन्दकिशोरकी दक्षतापर उनकी बहुत ज्यादा श्रद्धा थी। इसके सिवा, रेलवेके काममें मोटी-मोटी त्रुटियोंसे अपसारण-दक्षताके दृष्टान्त भी उनके जाने-हुए थे।

नौकरी छोड़नी पड़ी। साहबकी मददसे रेल-कम्पनीका पुराना लोहा वग़ैरह सस्ते दाममें खरीदकर उन्होंने अपना निजी कारखाना खोल दिया।

तब युरोपका पहला महायुद्ध छिड़ चुका था ; और बाजार था सर-गरम। नन्दकिशोर अत्यन्त बुद्धिमान व्यवहार-कुशल और सुचतुर आदमी थे, उस गरमा-गरम बाजारमें उनके रोजगारमें नई-नई नाली-प्रणालियोंसे मुनाफेके रुपयोंकी बाढ़-सी आ गई।

इतनेमें, उनपर एक-और शौक सवार हो गया।

नन्दकिशोर व्यवसायके कामसे कुछ दिन पहले पंजाब गये थे। वहाँ जुट गई उनकी एक सङ्गिनी। सवेरे बरण्डेमें बैठे चाय पी रहे थे, इतनेमें एक बीस सालकी लड़की अपना घाघरा हिलाती-हुई बिना किसी सङ्कोचके उनके सामने आ खड़ी हुई। चमकती-हुई आँखें हैं, और ओठोंपर है मुसकुराहट, मानो पैनाई-हुई छुरी हो। उसने नन्दकिशोरके बिलकुल पैरोंके पास आकर कहा, "बाबू साहब, मैं कई दिनोंसे दोनों वक्त यहाँ आकर तुम्हें देख रही हूँ। मुझे ताज्जुब होता है।"

नन्दकिशोरने हँसते-हुए कहा, "क्यों, तुमलोगोंके यहाँ क्या 'चिड़ियाघर' नहीं है ?"

उसने कहा, "चिड़ियाघरकी कोई जरूरत नहीं। जिन्हें उसके भीतर रखना चाहिए, वे सब बाहर छूटे हुए हैं। इसीसे मैं आदमीकी तलाशमें हूँ।"

"मिला ?"

नन्दकिशोरकी तरफ इशारा करके वह बोली, "मिल तो गया।"

नन्दकिशोरने हँसते-हुए कहा, "क्या गुण देखा, बताना जरा ?"

उसने कहा, "यहाँके बड़े-बड़े सब सेठजी गलेमें सोनेकी जंजीर लटकाये, हाथमें हीरेकी अँगूठी डाले, तुम्हें घेरे फिर रहे थे ; समझते थे कि परदेसी हैं, बङ्गाली हैं, कारबार कुछ समझता नहीं। अच्छा शिकार हाथ लगा है। मगर मैंने देखा कि उनमेंसे एकके भी फन्देमें तुम नहीं आये। उलटे वे ही तुम्हारे जालमें आ फँसे। किन्तु वे अभी तक समझे नहीं, मैं समझ गई।"

नन्दकिशोर चौंक पड़े उसकी बात सुनकर। समझ गये कि है कोई चीज,— मामूली लड़की नहीं।

लड़कीने कहा, "मैं अपनी बात तुमसे कहती हूँ, सुन रक्खो। हमारे मुहल्लेमें एक बड़े नामी ज्योतिषी हैं। उन्होंने मेरी जन्मपत्री देखकर कहा था, किसी दिन दुनियामें मेरा बड़ा नाम होगा। कहा था, मेरे जन्मस्थानमें शैतानकी दृष्टि है।"

नन्दकिशोरने कहा, "कहती क्या हो! शैतानकी दृष्टि?"

लड़कीने कहा, "आप तो जानते हैं, बाबू साहब, दुनियामें सबसे बड़ा नाम है शैतानका। लोग उसकी निन्दा चाहे जितनी करें, पर है वह बिलकुल खरा। हमारे बाबा बम-भोलानाथ नशेमें चूर रहते हैं। उनका काम ही नहीं संसार चलाना। देखो-न, अंग्रेज-सरकारने शैतानीके जोरसे दुनिया जीत ली है, क्रिश्चियनिटोके जोरसे नहीं। किन्तु वे हैं खरे, इसीसे राज्यकी रक्षा कर सके हैं। जिस दिन वे इस उसूलके खिलाफ चलने लगेंगे उसी दिन शैतान उनके कान ऐंठ देगा, बेचारे बेमौत मारे जायेंगे।"

नन्दकिशार दंग रह गये।

लड़की कहने लगी, "बाबू, नाराज न होइयेगा। तुम्हारे अन्दर उस शैतानका मन्तर है। इसीसे तुम्हारी होगी जीत। बहुतसे पुरुषोंको मैं बहका चुकी हूँ किन्तु मेरे ऊपर भी बाजी मारनेवाला मैंने तुम्हींको देखा। मुझे तुम मत छोड़ना, बाबू, नहीं तो नुकसानमें रहोगे।"

नन्दकिशोर मुसकरा दिये, बोले, "क्या करना होगा?"

"कर्जके मारे मेरी नानीका घर-द्वार सब बिका जा रहा है, तुम्हें उसका कर्ज चुका देना पड़ेगा।"

"कितना रुपया देना है?"

"सात हजार।"

नन्दकिशोर चौंक पड़े उसके दावेकी हिम्मत देखकर। बोले, "अच्छा, मैं दे दूँगा रुपया,– किन्तु उसके बाद?"

"उसके बाद मैं तुम्हारा संग कभी भी नहीं छोड़ूँगी।"

"क्या करोगी तुम?"

"देखूँगी, कोई तुम्हें ठग न सके, एक मेरे सिवा।"

नन्दकिशोर अबकी बार हँस पड़े। बोले, "अच्छी बात है, बात पक्की रही। यह लो, पहन लो मेरी अँगूठी।"

कसौटी है उनके मनमें, उसपर निशान पड़ गया एक कीमती धातुका। देख लिया उन्होंने, लड़कीके भीतर कैरेक्टरका तेज चमक रहा है ; और वे समझ गये कि वह अपना मूल्य आप समझती है, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। नन्दकिशोरने अनायास ही कह दिया था, 'दे दूँगा रुपया' ; और दे दिये सात हजार रुपये।

उस लड़कीको वहाँ सब सोहिनी कहा करते थे। अच्छी सुडौल गठीली देह है और सुन्दर चेहरा। किन्तु, चेहरेपर मन डिग जाय, नन्दकिशोर उस-जातके आदमी ही न थे। यौवनकी हाटमें मनको लेकर जुआ खेलनेका उनके पास समय ही न था।

नन्दकिशोर सोहिनीको जिस दशामेंसे लाये थे वह बहुत ज्यादा निर्मल नहीं थी, और न निर्जन-निमग्न ही थी। नन्दकिशोर ऐसे एकरुखे आदमी थे कि सांसारिक प्रयोजन या प्रथागत आचार-विचारकी परवाह ही नहीं करते थे। उनके मित्रोंमेंसे कोई-कोई पूछते, 'ब्याह कर लिया है क्या ?' जवाबमें वे सुनते, 'ब्याह बहुत ज्यादा मात्रामें नहीं, सहने-लायक ही हुआ है।' लोग हँस देते जब देखते कि वे स्त्रीको अपनी विद्याके ढाँचेमें ढालनेके लिए कमर कसके जुट पड़े हैं। और पूछते, "श्रीमतीजी प्रोफेसरी करने जायेंगी क्या कहीं ?" नन्दकिशोर जवाब देते, "नहीं, उसे 'नन्दकिशोरी' बनाना है, यह हरएक स्त्रीसे नहीं हो सकता।" और कहते, "मैं असवर्ण-विवाह पसन्द नहीं करता।"

"सो कैसे ?"

"पति तो हो इंजीनियर, और पत्नी हो रसोईदारिन, यह धर्मशास्त्रमें निषिद्ध है। घर-घर देखा जाता है कि दो अलहदा जातका गठबन्धन हुआ है, मैं जान मिलाये ले रहा हूँ। प्रतिमता स्त्री चाहते हो तो पहले मनका मेल कराओ।"

२

नन्दकिशोरकी मृत्यु हो गई प्रौढ़-अवस्थामें किसी-एक दुःसाहसिक वैज्ञानिक परीक्षाके अपघातमें।

सोहिनीने सब कारोबार बन्द कर दिया। विधवा स्त्रीको ठगनेके लिए कारबारी लोग आ टूटे चारों तरफसे। और मुकदमोंका जाल बिछा दिया उनलोगोंने जिनका नाममात्रको भी रिश्ता था नन्दकिशोरसे। सोहिनी खुद कानूनके सब पेच समझ लेने लगी। उसपर फैला दिया नारीका मोह-जाल ठीक जगह देखकर वकीलोंके मुहल्लेमें। इसमें उसकी असङ्कोच-निपुणता थी, संस्कार माननेकी कोई बला ही न थी। एक-एक करके सभी मामलोंमें जीत हुई उसकी, दूरके रिश्तेका देवर गया जेल, दस्तावेज जाल करनेके अपराधमें।

सोहिनीके एक लड़की है, उसका नामकरण हुआ था 'नीलिमा'। लड़की ने स्वयं उसका परिवर्तन करके कर लिया है 'नीला'। कोई यह न समझ लें कि मा-बापने लड़कीका रंग काला देखकर एक मुलायम नामके नीचे उस निन्दाको दबा दिया हो। लड़की बहुत ही गोरी है। मा कहा करती है, उसके पुरखे काश्मीरसे आये थे। लड़कीकी देहमें फूट उठी है काश्मीरी श्वेतकमलकी आभा, आँखोंमें है नील-कमलका आभास, और बालोंमें चमक है पिङ्गलवर्णकी।

लड़कीके ब्याहके प्रसङ्गमें कुल-शील और जाति-गोत्रकी बातपर विचार करनेका रास्ता नहीं था। एकमात्र रास्ता था 'मन-मोहित-होनेका', और शास्त्रको लाँघ गया उसका जादू। कम-उमरका माड़वारीका लड़का था एक। बाप काफी पैसा छोड़ गये थे, और शिक्षा थी उसकी इस जमानेकी। अकस्मात् वह आ पड़ा अनङ्गके अदृश्य फन्देमें। नीला एक दिन गाड़ीकी प्रतीक्षामें स्कूलके दरवाजेके पास खड़ी थी। इतनेमें लड़केने उसे देख लिया। उसके बादसे वह और भी कुछ दिन तक उस रास्तेपर वायु-सेवन करता रहा। स्वाभाविक स्त्री-बुद्धिकी प्रेरणासे लड़की गाड़ी आनेके बहुत पहलेसे ही गेटके पास आकर खड़ी हो जाती। सिर्फ वही एक माड़वारी लड़का नहीं, और भी

दो-चार सम्प्रदायके युवक यहाँ आकरण चहलकदमी किया करते। उसमें यही एक लड़का कूद पड़ा आँख मीचकर उसके जालमें। फिर निकला नहीं, सिविल-मतानुसार ब्याह कर लिया उसने समाजके उस पार। किन्तु मियाद ज्यादा दिनकी नहीं मिली। उसके भाग्यसे वधू आई पहले, उसके बाद दाम्पत्यके बीचमें लकीर खींच दी मोतीझराने, उसके बाद मुक्ति।

फिर भले-बुरेका पँचमेल उपद्रव चलने लगा। माको दिखाई देने लगी लड़कीकी तड़पन। और याद उठ आई अपने यौवन-कालकी ज्वालामुखीकी चञ्चलता। माका मन उद्विग्न हो उठा। अत्यन्त निविड़तासे उच्च-शिक्षाकी चहारदीवारी खड़ी कर दी। पुरुष शिक्षक नहीं रखा। एक विदुषीको लगा दिया उसके शिक्षण-कार्यमें। नीलाके यौवनकी आँच लगती रहती उसके भी मनमें, वह उसे गरम कर देती अनिर्देश्य कामनाकी उत्तप्त वाष्पसे। मुग्धोंका झुण्ड इधर-उधर भीड़ लगाये रहता। किन्तु दरवाजा था बन्द। मैत्री-प्रयासिनियाँ निमन्त्रण दिया करतीं चाय टेनिस और सिनेमाके लिए, पर निमन्त्रण पहुँचता ही नहीं ठीक ठिकानेपर। बहुतसे लोभी फिरने लगे मधु-गन्धपूर्ण आकाशमें, किन्तु किसी भी अभागे कङ्गालको सोहिनीका छूट-पत्र नहीं मिलता। इधर देखा जाता कि उत्कण्ठित कन्या मौका पाते ही उचकना-झाँकना चाहती है अस्थानमें। और ऐसी किताबें पढ़ती है जो टेक्स्टबुक-कमेटीसे अनुमोदित नहीं हैं, छुपे-छुपे ऐसी-ऐसी तसवीरें मँगा लेती है जो आर्ट-शिक्षाके कतई अनुकूल नहीं। विदुषी शिक्षयित्री तकको उसने अन्य-मनस्क कर दिया। एक दिन डायोसिशनसे घर लौटते समय रास्तेमें रूखे-बिखरे बालवाले, जिसके मूँछोंकी जगह रेख ही भीजी थी अभी, एक सुन्दर लड़केने उसकी गाड़ीमें चिट्ठी डाल दी थी। नीलाके खूनमें उस दिन कँपकँपी आ गई थी। चिट्ठी उसने छिपा रखी थी अपनी कुरतीमें। पकड़ी गई माके हाथ। दिन-भर कमरेमें बन्द रही बिना खाये-पिये।

सोहिनीके पतिने जिन लड़कोंको छात्रवृत्ति दी थी उन सब अच्छे-अच्छे विद्यार्थियोंमें सोहिनीने वरकी तलाश की है। किन्तु प्रायः सभी कनखियोंसे उसके धनकी ओर देखते हैं। एक तो अपनी 'थीसिस' ही उसके नामपर

समर्पण कर बैठा। सोहिनीने कहा, "हाय री तकदीर, कैसा शर्मिन्दा किया है तुमने मुझे। तुम्हारी पोस्टग्रैजुएटी मियाद खतम होनेको है सुनती हूँ, और तुम माला-चन्दन चढ़ा रहे हो गलत ठिकानेपर। हिसाबसे भक्ति बिना किये उन्नति जो नहीं होगी!" कुछ दिनोंसे एक लड़केकी तरफ सोहिनीका खास ध्यान जा रहा है। लड़का अच्छा है, पसन्दके काबिल। नाम है रेवती भट्टाचार्य। अभीसे वह सायन्सकी डाक्टर पदवीपर चढ़ा बैठा है। उसके दो-एक लेखोंकी जाँच हो चुकी है विदेशोंमें।

३

लोगोंसे मिलने-जुलनेकी कला सोहिनीको खूब आती है। मन्मथ चौधरी रेवतीके शुरू-शुरूके अध्यापक हैं। उन्हें सोहिनीने वश कर लिया। कुछ दिन चायके साथ रोटी-टोस्ट, अमलेट और अण्डेके बड़े खिलाकर बात छेड़ी। बोली, "आप शायद सोचते होंगे कि मैं आपको बार-बार चाय पीने क्यों बुलाया करती हूँ।"

"मिसेस मल्लिक, मैं तुमसे निश्चयसे कह सकता हूँ कि मेरी दुश्चिन्ताका विषय ही नहीं यह।"

सोहिनी बोली, "लोग सोचते हैं कि हम मित्रता किया करती हैं स्वार्थकी गरजसे।"

"देखो, मिसेस मल्लिक, मेरा मत यह है कि गरज चाहे जिसकी भी हो, मित्रता स्वयं ही तो एक लाभ है। और यह भी कौनसी कम बात है कि मुझ-जैसे अध्यापकसे भी किसीका स्वार्थ सध सकता है। असलमें अध्यापक-जातकी बुद्धि किताबोंके बाहरकी हवा न खा सकनेके कारण फीकी पड़ जाती है। मेरी बात सुनकर तुम्हें हँसी आ रही है मालूम होता है। देखो, यद्यपि मैं करता मास्टरी ही हूँ, फिर भी, हास्यालाप करना भी आता है मुझे। भविष्यमें चाय पीनेका निमन्त्रण देनेके पहले इतना जान रखना अच्छा है।"

"जान लिया, आफत चुकी। मैंने बहुतसे अध्यापक देखे हैं जिनके मुँहसे हँसी निकालनेके लिए डाक्टर बुलाना पड़ता है।"

"वाह वाह, मेरे ही दलकी मालूम होती हो तुम तो! तो अब असल बात छिड़ जाने दो।"

"आप शायद जानते होंगे, मेरे पतिके जीवनमें एकमात्र आनन्द था उनकी 'लैबोरेटरी'। मेरे कोई लड़का नहीं,—उस लैबोरेटरीमें बिठानेके लिए मैं एक लड़का ढूँढ रही हूँ। सुना है, रेवती भट्टाचार्य इस काबिल है।"

"है तो काबिल लड़का, इसमें सन्देह नहीं। किन्तु उसकी जिस लाइनकी विद्या है उसे शेष तक चालान करनेमें माल-मसाला कम नहीं लगेगा।"

सोहिनीने कहा, "मेरे रुपयोंके ढेरपर फफूँदी पड़ रही है। मेरी उमरकी विधवा स्त्रियाँ देवी-देवताओंके दलालोंको दलाली दे-देकर परलोकका दरवाजा चौड़ा करानेकी कोशिश करती हैं। आप शायद सुनके नाराज होंगे कि मेरा उन-सब बातोंपर जरा भी विश्वास नहीं।"

चौधरीकी आँखें फट गईं, बोले, "तो तुम क्या मानती हो?"

"मनुष्य-सा मनुष्य अगर कोई मिले, तो उसका सब पावना चुका देना चाहती हूँ, जहाँ तक मेरा सामर्थ्य है। यही मेरा धर्म-कर्म है।"

चौधरी बोल उठे, "हुर्रे! शिला बहती है पानीमें! अब तो देख रहा हूँ औरतोंमें भी दैवसे कहीं-कहीं बुद्धिका प्रमाण मिलता है। मेरा एक बी०एस-सी० बेवकूफ छात्र है, अचानक उस दिन क्या देखता हूँ कि गुरुके पाँव छूकर वह कलाबाजी खेलने लगा है और मगजसे बुद्धि उड़ी जा रही है सेमलकी रुईकी तरह। लो, अपने घरमें ही तुम उसे लैबोरेटरीमें बिठा देना चाहती हो? जरा अलग कहीं हो तो नहीं चल सकता?"

"चौधरी महाशय, आप गलती न करिये। आखिर मैं हूँ तो स्त्री ही। यहीं इस लैबोरेटरीमें मेरे पतिने साधना की है। उनकी उस वेदीके नीचे किसी योग्य व्यक्तिको बत्ती जलाये रखनेके लिए अगर मैं बिठा सकी, तो जहाँ भी कहीं हों वे, उनका मन प्रसन्न रहेगा।"

चौधरीने कहा, "वाह ओह, अब कहीं नारीके गलेकी आवाज सुनाई दी! सुननेमें बुरी नहीं लगी। एक बात समझ रखना, रेवतीको अगर अन्त तक पूरी सहायता करना चाहती हो तो लाख रुपयेकी भी सीमा पार करनी होगी।"

"सो पार करनेके बाद भी मेरे पास किनकी-भुसी कुछ-न-कुछ रह जायगी।"

"किन्तु परलोकमें जिन्हें प्रसन्न करना चाहती हो उनका मिजाज खराब तो नहीं हो जायगा ? सुना है, परलोकके लोग चाहें तो सरपर सवार होकर उछल-कूद मचा सकते हैं।"

"आप अखबार तो पढ़ते ही होंगे। आदमीके मरते ही उसकी गुणावली अखबारोंके पैराग्राफोंमें लहरा उठती है। इसलिए मृत मनुष्यकी वदान्यतापर विश्वास करनेमें कोई दोष नहीं। रुपये जिस आदमीने इकट्ठे किये हैं, बहुतसे पाप भी जमा किये होंगे उसके साथ। हमलोग आखिर हैं किसलिए, अगर थैली झाड़कर पतिके पापको हलका न कर सकीं ? जाने दो रुपया, मुझे रुपयोंकी जरूरत नहीं।"

अध्यापक उत्तेजित होकर बोल उठे, "अब मैं क्या कहूँ तुमसे! खानसे सोना निकलता है, वह खालिस सोना है, यद्यपि उसमें मिला रहता है बहुत-कुछ। तुम वही हो, छद्मवेशी सोनेकी डली। पहचान लिया मैंने तुमको। अब क्या करना है सो बताओ ?"

"उस लड़केको राजी कर लीजिये।"

"कोशिश करूँगा। किन्तु काम आसान नहीं। और-कोई होता तो तुम्हारा दान उछलकर ले लेता।"

"खटका कहाँ है, बताइये-न ?"

"बचपनसे एक स्त्री-ग्रह उसकी जन्मपत्री दखल किये बैठा है। रास्ता रोक रखा है अटल अबुद्धिने।"

"कहते क्या हैं! पुरुष होकर—"

"देखो, मिसेस मल्लिक, नाराज किससे होगी! जानती हो मेट्रियार्कल समाज किसे कहते हैं ? जिस समाजमें स्त्रियाँ ही हों पुरुषोंसे श्रेष्ठ। किसी समय द्राविड़ी-समाजकी लहरें बंगोपसागरमें खेला करती थीं।"

सोहिनीने कहा, "वे सुदिन बीत गये। भीतर ही-भीतर लहरें रोक रही होंगी शायद, उलझा देती होंगी बुद्धिको, पर पतवार जो अकेले पुरुषके

ही हाथमें है। कानमें मन्त्र फूंकते हैं वे ही, और जोरसे फनेठी भी लगाते हैं। कान उपड़नेकी नौबत आ जाती है।"

"अहा-हा, बात करना जानती हो तुम। सुनो, तुम-जैसी नारियोंका युग अगर आये कभी, तो मेट्रियार्कल समाजमें मैं तो धोबीका हिसाब रक्खूं नारियोंकी साड़ी-कुरतियोंका, और कालेजके प्रिन्सपलको भेज दूँ ढेंकी चलाने। मनोविज्ञान कहता है, बंगालमें मेट्रियार्की बाहर नहीं, है नाड़ीमें। 'मा'-'मा' की हम्बाध्वनि और-किसी देशके पुरुषोंमें सुनी हैं कहीं? यह तुम्हें बताये देता हूँ, रेवतीकी बुद्धिके छोरपर चढ़ी बैठी है एक जबरदस्त नारी।"

"किसीसे प्रेम करता है क्या?"

"ओह-हो, तब तो कोई बात ही नहीं थी। उसकी नसोंमें प्राण करते रहते हैं धुकधुक्। युवतीके हाथ बुद्धि खोनेका बयाना लेकर तो आया ही है, यही तो उमर है उसकी। सो न होकर इस कच्ची उमरमें वह एक माला-जपकारिणीके हाथकी मालाका मणि बन गया है। उसे बचायेगा कौन? न यौवन बचा सकता है, न बुद्धि, न विज्ञान।'

"अच्छा, एक दिन चाय पीने बुलाया जा सकता है क्या उन्हें? हम जैसे अपवित्रोंके घर खायेंगे-पीयेंगे तो?"

'अपवित्रोंके घर! नहीं खायेगा-पीयेगा तो पाटपर पछाड़-पछाड़कर उसे मैं ऐसा पवित्र कर दूँगा कि ब्राह्मणत्वका एक दाग भी न रहेगा कहीं उसकी अस्थि-मज्जामें। एक बात पूछता हूँ मैं तुमसे। शायद तुम्हारी एक सुन्दरी लड़की भी है-न?"

"है। जले-भागकी है तो सुन्दरी ही। उसका क्या करूँ, बताइये?"

"नहीं नहीं, मुझे गलत न समझ लेना। वैसे मैं सुन्दरी लड़की पसन्द करता हूँ, इसे मेरी एक बीमारी ही समझना चाहिए। किन्तु उसके घरवाले अरसिक ठहरे, डर जायँगे।"

"डरनेकी कोई बात ही नहीं,—मैंने अपनी ही जातिमें उसका ब्याह करना तय कर रखा है।"

यह महज एक बनावटी बात है सोहिनीकी।

चौधरीने कहा, "तुमने खुद तो विजातीय विवाह किया है ?"

"हैरान कम नहीं हुई। सम्पत्तिका दखल पानेके लिए मुकदमे लड़ने पड़े हैं बहुत। जिस तरह जीत पाई हूँ,– कहनेकी बात नहीं।"

"मैं सुन चुका हूँ कुछ-कुछ। विरोधी-पक्षके आर्टिकेल्ड-क्लर्कको लेकर तुम्हारे खिलाफ कुछ अफवाह फैल गई थी। मामला जीतकर तुम तो खिसक आईं, किन्तु वह बेचारा आत्महत्याकी तैयारी करते-करते बच गया किसी कदर।"

"इतने युगोंसे स्त्रियाँ टिकी-हुई हैं किस बूतेपर ? छल करनेमें कुछ कम कौशल नहीं लगता, लड़ाईके दाव-पेचके समान ही है वह,– मगर हाँ, उसमें मधु भी कुछ खर्च करना पड़ता है। यह है नारीकी स्वभावदत्त युद्धनीति।"

"देखो तो, फिर तुम मुझे गलत समझ रही हो। हम हैं विज्ञानी, न कि विचारक। स्वभावके खेलको हम निष्काम-रूपसे देखते चले जाते हैं। उस खेलमें जो फल होनेवाला होता है वही फलने लगता है। तुम्हारे तईं भी फल अच्छा ही फला था। मैंने कहा था, धन्य है तुम-जैसी स्त्रीको। और यह भी सोचा था कि अच्छा हुआ जो मैं उस समय प्रोफेसर था, आर्टिकेल्ड क्लर्क नहीं था। नहीं-तो मेरी भी शामत आये बिना न रहती। मर्करी सूरजसे जितना दूर है उतना ही वह बच गया समझो। यह गणितका हिसाब है,– इसमें न भला है, न बुरा। ये सब बातें समझना शायद तुम्हें आता होगा।"

"हाँ, सो तो आता है। ग्रह औरोंको खींचते-हुए भी चलते हैं और खुद खिचावसे बचकर भी निकलते हैं,– यह सीखने-योग्य तत्व तो है ही।"

"और भी एक बात कबूल कर रहा हूँ। अभी-अभी तुम्हारे साथ बात करते-करते एक हिसाब मन-ही-मन लगा रहा था, वह भी गणितका हिसाब है। सोच देखो, उमर अगर दस साल भी कम होती, तो खामखा आज एक विपत्तिका सामना करना पड़ता। कोलिशन होते-होते बच गया समझ लो। फिर भी भापका तूफान आ रहा है हृदयमें। सोच देखो, सृष्टि आदिसे अन्त तक सिर्फ गणितका ही खेल है।"

इतना कहकर चौधरी अपने दोनों घुटनोंपर जोरसे थपकियाँ जमाते-हुए ठहाका मारकर हँस पड़े। एक बातका उन्हें होश ही नहीं था कि उनसे मिलनेके पहले सोहिनी दो घण्टे तक रंग-ढंगसे साज-शृङ्गार करके इस ढंगसे उमर बदल आई है कि सृष्टिकर्ता भी धोखा खा जायँ।

४

दूसरे दिन अध्यापक चौधरीने आकर देखा कि सोहिनी एक लोमशून्य गरियल घायल कुत्तेको नहलाकर तौलियासे उसकी देह पोंछ रही है।

चौधरीने पूछा, "इस मनहूस जानवरका इतना सम्मान क्यों ?"

"इसे मरतेसे बचाया है इसलिए। मोटरके नीचे दबकर टाँग टूट गई थी, बैण्डेज बाँधनेसे अब कुछ-कुछ ठीक हो गई है। अब इसके जीवनमें मेरा भी शेयर है।"

"रोज-रोज इस मनहूसका चेहरा देखनेसे मन नहीं खराब होगा ?"

"चेहरा देखनेके लिए तो इसे रखा नहीं। मरते-मरते यह जो जी रहा है, यह देखना मुझे अच्छा लगता है। इस प्राणीके जीवनकी आवश्यकताओं को जब मैं रोजमर्रा मिटाती रहती हूँ तब धर्म-कर्मके लिए बकरीके बच्चेके गलेमें रस्सी बाँधके मुझे कालीघाट नहीं दौड़ना पड़ता। तुम्हारी बायालॉजी की लैबोरेटरी लूले-लँगड़े अपाहिज कुत्ते-खरगोशोंके लिए मैंने एक अस्पताल खोलनेका निश्चय किया है।"

"मिसेस मल्लिक, तुम्हें जितना ही देख रहा हूँ, मैं दंग रह जाता हूँ।"

"और भी ज्यादा देखेंगे तो यह जाता रहेगा। आपने रेवती-बाबूकी खबर देनेको कहा था-न, उसे शुरू कर दीजिये।"

"मेरे साथ दूरके सम्पर्कसे उनलोगोंका सम्बन्ध है। इसीसे उनके घरकी खबर मालूम रहती है मुझे। रेवतीकी मा उसे जन्म देकर ही मर गई थी। तबसे ही वह बुआके हाथ पला है। उसकी बुआकी आचार-निष्ठा बिलकुल ठोस है। ऐसी हैं वे, कि जरा-सी कोई त्रुटि-विच्युति होते ही दुनियाको सरपर उठा लेती हैं। उनके घरमें ऐसा कोई आदमी नहीं था जो उनसे

डरना न हो। उनके हाथ पड़कर रेवतीका पौरुष बिलकुल सतुआ बन गया है। कालेजसे लौटनेमें कभी पाँच मिनटकी देर हो जाती है तो पचीस मिनट लगते हैं उसकी कैफियत देनेमें।"

सोहिनीने कहा, "मेरा तो खयाल है कि पुरुष शासन करें और स्त्रियाँ करें लाड़-प्यार,—तभी वजन ठीक रह सकता है।"

अध्यापकने कहा, "वजन ठीक रखके चलना मराल-गामिनियोंकी प्रकृतिमें ही नहीं है। वे इधर झुकेंगी या उधर झुकेंगी, झुकना उनका वस्तु-स्वभाव यानी धर्म है। कुछ खयाल न करना, श्रीमती मल्लिक, इस जातिमें दैवसे ही कोई ऐसी मिलती है जो माथेको रखती हो खड़ा और चलती हो सीधी चाल। जैसे—"

"खैर, आगे कहनेकी जरूरत नहीं। पर, मेरे भीतर भी जड़की तरफ 'स्त्री' यथेष्ट-परिमाणमें है। देखते नहीं, कैसी झुकी जा रही हूँ! यह लड़का फाँसनेकी झोंक है। नहीं-तो आपको परेशान करती क्या?"

"देखो, बार-बार इस बातको न दुहराया करो। समझ लो कि आज क्लासके लिए तैयार बगैर हुए ही चला आया हूँ। कर्तव्यकी असावधानी आज इतनी अच्छी लग रही है!"

"शायद स्त्री-जातपर ही आपकी विशेष कुछ कृपा है।"

"जरा भी असम्भव नहीं। किन्तु उसमें कुछ तारतम्य जरूर है। खैर, यह बात पीछे होगी।"

सोहिनीने हँसते-हुए कहा, "पीछे नहीं भी हो तो काम चल जायगा। फिलहाल जो बात छिड़ी है उसे खतम कर दीजिये। रेवती-बाबूकी इतनी उन्नति हुई कैसे?"

"जितनी हो सकती थी उसकी तुलनामें कुछ भी नहीं हुई। एक कामसे किसी ऊँचे पहाड़पर जाना उसके लिए अत्यन्त आवश्यक हो गया था। उसने निश्चय भी कर लिया बदरिकाश्रम जानेका। मगर, देखो गजबकी बात! उसकी बुआकी भी थी एक बुआ,—और वह मरी भी तो कहाँ जाकर, ठेठ बदरिकाश्रमके रास्तेमें! बुआने भतीजेसे साफ कह दिया, 'मैं

जब तक जीती हूँ, तू पहाड़-पहाड़पर कहीं भी नहीं जा सकता।' लिहाजा तबसे मैं सर्वान्तःकरणसे जो कामना कर रहा हूँ उसे मुँह खोलकर नहीं कह सकता।"

"ठीक है। पर, इसमें सिर्फ बुआको ही दोष देनेसे कैसे काम चलेगा। बुआके दुलारे भतीजेकी अस्थि क्या कभी पकेगी ही नहीं?"

"सो तो मैं पहले ही बता चुका हूँ। मेट्रियार्की नसोंमें हम्वाध्वनि जगा देती है, हतबुद्धि हो जाते हैं वत्सगण। अफसोसकी बात कहाँ तक कहूँ! यह तो हुई नम्बर एक बात। इसके बाद रेवतीने जब सरकारसे वृत्ति लेकर केम्ब्रिज जानेका निश्चय किया तो फिर उमड़ पड़े बुआजीके हृदयाकाशमें आँसुओंके बादल गड़गड़ाहटके साथ। उनकी धारणा थी कि वह जा रहा है मेमसे ब्याह करने। मैंने कहा, 'कर ही लिया तो क्या है।' बस फिर क्या था! बात अनुमानकी ही थी, हो गई पक्की-पुख्ता। बुआने कहा, 'लड़का अगर विलायत गया, तो मैं गलेमें फाँसी लगाके मर जाऊँगी।' किस देवताकी दुहाई देनेसे फाँसीकी वह रस्सी तैयार होती, मैं नास्तिक होनेसे जानता न था; और न वह बाजारमें ही मिली। लिहाजा रह गया मैं मन मारकर। रेवतीको मैंने खूब-जरा डाट-फटकार दिया,—'स्टुपिड' कहा, 'डन्स' कहा, 'इम्बेसील' कहा। बस, यहीं मामला खतम। फिलहाल आप भारतीय कोल्हूसे बूँद-बूँद तेल निकालनेके काममें व्यस्त हैं।"

सोहिनी धीरज खो बैठी, बोली, "दीवारसे सिर दे मारनेको जी चाहता है। खैर कोई बात नहीं। एक स्त्रीने उसे रसातलमें पहुँचाया है तो दूसरी नारी उसे खींचकर निकालेगी मुक्त आकाशमें। यह मेरा प्रण रहा।"

"एक बात साफ कहता हूँ, मैडम! जानवरोंको सींग पकड़कर दुहोनेमें तुम्हारे हाथ पक्के हैं, पर पूँछ पकड़कर निकालनेमें अभी उतने दुरुस्त नहीं। हाँ, अबसे अभ्यास शुरू कर सकती हो। एक बात पूछता हूँ, विज्ञानमें इतना उत्साह तुममें आया कहाँसे?"

"सभी तरहके विज्ञानमें मेरे पतिका मन जीवन-भर इतना तल्लीन रहा है कि उसे लोग उन्माद ही कहते। उनका नशा ही था धर्मी-पुष्ट और

'लैबोरेटरी'। मुझे चुरुट पिला-पिलाकर लगभग बर्मी-औरत बना दिया था उन्होंने, पीछे छोड़ दी, जब देखा कि पुरुषोंकी आँखोंको अखरती है। उन्होंने अपना एक और नशा मेरे ऊपर जमाया था। पुरुष स्त्रियोंको मुग्ध करते हैं बेवकूफ़ बनाकर, उन्होंने मुझे मुग्ध किया था अपनी विद्यासे। देखिये, चौधरी, पतिकी कमजोरियाँ स्त्रीसे छिपी नहीं रहतीं ; किन्तु उनमें कहीं भी कोई खाद-खोट नहीं देखी। पाससे जब देखती थी तब देखा है कि वे बड़े हैं, और आज दूरसे देख रही हूँ तो देखती हूँ कि वे और भी बड़े हैं।"

चौधरीने पूछा, "सबसे बढ़कर बड़े वे कहाँ मालूम हुए ?"

"बताऊँ ? विद्वान होनेसे नहीं, किन्तु विद्यापर उनकी निष्काम भक्ति थी इसलिए। वे अपनी एक विशेष पूजाके प्रकाशमें, एक विशेष पूजाकी हवामें रहते थे। हम स्त्रियाँ तो देखने-छूनेकी वस्तु बगैर पाये पूजा करनेकी थाह ही नहीं पातीं। किन्तु उनकी 'लैबोरेटरी' आज मेरी पूजाका 'देवता' हो गई है। इच्छा होती है कि कभी कभी वहाँ धूप जलाकर शंख-घंटा बजाऊँ। सिर्फ डरती हूँ अपने पतिकी घृणासे। उनकी जब दैनिक पूजा चालू थी तब इन सब यन्त्र-तन्त्रोंको घेरकर भीड़ लगाये रहते थे विद्यार्थीगण, शिक्षा लिया करते थे उनसे। मैं भी जाकर जम जाती थी।"

"लड़के क्या विज्ञानमें मन लगा सकते थे ?"

"जो लगा सकते थे उनका चुनाव हो जाता था। ऐसे लड़के मैंने देखे हैं जो सचमुचके वैरागी थे। और ऐसा भी देखा है कि कोई-कोई नोट लेनेके छलसे बगलके पतेपर चिट्ठी लिखकर साहित्य-चर्चा भी किया करते थे।"

"कैसी लगती थी साहित्य-चर्चा ?"

"सच बताऊँ ? बुरी नहीं लगती थी। पति चले जाते थे कामसे, और भावुकोंके मन आसपासमें चक्कर काटा करते थे।"

"कुछ खयाल न करना, मैं जरा साइकॉलॉजीको भी स्टडी किया करता हूँ। मेरी जिज्ञासा यह है कि उन्हें कुछ फल भी मिलता था क्या ?"

"बतानेकी इच्छा नहीं होती, गन्दी हूँ मैं। दो-चार जनोंसे मेरी जान-पहचान हुई थी, जिनकी याद आनेसे आज भी मनमें मरोड़ उठने लगती है।"

"दो-चार जनोंसे ?"

"मन जो लोभी ठहरा, वह मांस-मज्जाकी भूभलके नीचे लोभकी आग दबाये रखता है, जरा-सा निमित्त-कारण पाते ही जल उठती है वह। मैंने तो शुरूमें ही नाम डुबो दिया था,—सच कहनेमें मुझे कोई दुविधा ही नहीं होती। आजन्म तपस्विनी नहीं होतीं हमलोग। तड़क-भड़क करते-करते प्राण निकले जा रहे हैं हम-औरतोंके। द्रौपदी कुन्तियोंको बनना पड़ता है *सीता-सावित्री। एक बात कहती हूँ, चौधरी साहब, याद रखियेगा*, बचपनसे अच्छा-बुरा समझनेका ज्ञान मुझमें स्पष्ट नहीं था। किसी गुरुसे तो मुझे शिक्षा मिली नहीं थी। इससे मैं बुराईमें कूद पड़ी हूँ आसानीसे, और पार भी हो गई हूँ आसानीसे। देहपर दाग लगा है किन्तु मनमें कोई छाप नहीं लगी। कोई भी चीज मुझे पकड़के बाँध नहीं सकी है। कुछ भी हो, उन्होंने जाते *समय अपनी चिताकी आगसे मेरी आसक्तिमें आग लगा दी है*, जमे-हुए पाप एक-एक करके जलके खाक होते जा रहे हैं। इसी लैबोटरीमें ही जल रही है वह होमाग्नि।"

"ओह्हो, सच बात कहनेमें कैसा साहस है तुम्हारा !"

"सच बात कहला-लेनेवाला आदमी मिले तो कहना सहज हो जाता है। आप जो *अत्यन्त सहज हैं, बिलकुल सच्चे।"*

"देखो, चिट्ठी-लिखाड़ी जिन लड़कोंको तुम्हारा प्रसाद मिला था वे क्या अब भी आते-जाते हैं ?"

"ऐसा करके ही तो उनलोगोंने पोंछ दिया है मेरे मनका मैल। देखा कि उनलोगोंका लक्ष्य है मेरी चेकबुककी तरफ। सोचा होगा औरतोंका मोह तो मरनेवाला है नहीं, प्रेमकी सेंध मारकर सीधे पहुँच जायँगे मेरे लोहेके सन्दूकके पास। इतना रस नहीं है मुझमें, उन्हें यह बात मालूम नहीं थी। *मेरा ठहरा सूखा पंजाबी मन। मैं समाजके नियम-कानूनोंको बहा दे सकती* हूँ देहके स्रोतमें पड़कर, मगर बेईमानी हर्गिज नहीं कर सकती चाहे जान चली जाय। *मेरी लैबोरेटरीका एक पैसा भी वे नहीं निकलवा सके। मेरे प्राण* कठोर पत्थर बनकर दबाये बैठे हैं अपने देवताके भण्डारका द्वार। उनका

सामर्थ ही क्या कि वे उस पत्थरको गला सकें। जिन्होंने मुझे चुनकर अपना लिया था उन्होंने गलती नहीं की।"

"उन्हें मैं प्रणाम करता हूँ। और वे लड़के अगर मिल जायें तो अच्छी तरह उनके कान ऐंठ दूँ।"

विदा लेनेके पहले अध्यापक एक बार लैबोरेटरीमें घूम आये सोहिनीके साथ।

बोले, "यहाँ स्त्री-बुद्धिकी चुआई हो गई है भवकेसे,—अपदेवताकी गाद पड़ी रह गई नीचे, और निकल आई खालिस स्पिरिट।"

सोहिनीने कहा, "कुछ भी कहिये, मनसे डर नहीं जाता। स्त्री-बुद्धि विधाताकी आदि-सृष्टि है। जब उमर कम होती है, मनमें जोर रहता है, तब वह छिपी रहती है किसी अँधेरे कोनेमें, और ज्यों ही खून ठण्डा होने लगता है त्यों ही निकल आती है सनातनी बुआजी। उसके पहले ही मर जानेकी इच्छा रही मेरी।"

अध्यापकने कहा, "डरनेकी कोई बात नहीं, मैं कहता हूँ, तुम मशानमें ही मरोगी।"

५

सफेद साड़ी पहनकर और माथेके काले-सफेद बालोंमें पावडर लगाकर सोहिनी अपने चेहरेपर एक तरहका शुद्ध सात्त्विक भाव ले आई। और, लड़कीको साथ लेकर मोटर-रथमें बैठकर पहुँच गई बुटनिकल-गार्डन। लड़कीको पहनाई है नीलाभ धानी रंगकी बनारसी साड़ी, भीतरसे दिखाई देती है वसन्ती रंगकी चोली। माथेपर है कुंकुमकी बिन्दी, आँखोंमें है काजलकी बारीक एक रेखा, कँधेपर झूल रहा है जूड़ेका गुच्छा, और पैरोंमें हैं काले चमड़ेपर लाल-मखमलके कामवाले सैण्डल।

जिस आकाश-नीमकी वीथिकाके नीचे रेवती रविवार बिताता है, पहलेसे संवाद लेकर सोहिनीने वहीं जाकर उसे पकड़ा। प्रणाम किया बिल्कुल उसके पाँवपर सिर रखकर। अत्यन्त चञ्चल हो उठा रेवती।

सोहिनीने कहा, "कुछ खयाल मत करना, बेटा, आखिर तुम ब्राह्मणके लड़के हो, मैं हूँ छत्रीकी लड़की। चौधरीजीसे मेरे विषयमें सुना होगा।"

"सुना है। पर, यहाँ आपको बिठाऊँ कहाँ?"

"है तो सही यह ताजा हरी घास, ऐसा आसन मिलेगा कहाँ! सोचते होगे शायद, यहाँ मैं क्यों आई? आई हूँ अपना व्रत उद्यापन करने। तुम सरीखा ब्राह्मण तो ढूँढ़े नहीं मिलेगा।"

रेवतीने आश्चर्यके साथ कहा, "गुरु सरीखा ब्राह्मण!"

"और नहीं तो क्या! मेरे गुरुने कहा है, इस कालकी सबसे बढ़कर जो विद्या है उसमें जिनका दखल हो, वे ही ब्राह्मण हैं।"

रेवतीने लज्जित होकर कहा, "मेरे पिता करते थे यजमानी,-मैं मन्त्र-तन्त्र कुछ भी नहीं जानता।"

"कहते क्या हो! तुमने जो मन्त्र सीखा है उससे तो सारा संसार मनुष्यके वश हो गया है। तुम सोच रहे होगे, ये सब बातें स्त्रीके मुँहसे कैसे निकल रही हैं? यह गुरुकी ही देन है। दाता हैं स्वयं मेरे स्वामी। उनकी साधनाका जहाँ पीठस्थान था, वचन दो मुझे, वहाँ तुम्हें जाना ही होगा।"

"कल सवेरे मुझे छुट्टी है, जरूर आऊँगा मैं।"

"मैं देखती हूँ, तुम्हें पेड़-पौधोंका भी शौक है। बड़ा आनन्द हुआ मुझे। पेड़-पौधोंकी खोजमें मेरे पति गये थे बर्मा, मैंने उनका साथ नहीं छोड़ा था।"

यह ठीक है कि साथ नहीं छोड़ा, किन्तु विज्ञान-चर्चा इसका कारण नहीं। अपने भीतरसे जो गाद उठती थी, पतिके चरित्रमें भी उसका अनुमान किये बिना रहा नहीं जाता था उससे। सन्देहका संस्कार था उसकी नस-नसमें। एक बार नन्दकिशोर जब सख्त बीमार पड़ गये थे तब उन्होंने स्त्रीसे कहा था, "मरनेमें एकमात्र आराम यही है कि वहाँसे तुम मुझे ढूँढ़कर वापस नहीं ला सकतीं।"

सोहिनीने कहा था, "साथ तो जा सकती हूँ।"

नन्दकिशोरने हँसके जवाब दिया था, "तब तो बेमौत मरना होगा।"

सोहिनीने रेवतीसे कहा, "वर्मासे मैं एक पौधा लाई थी। बर्मी लोग उसे कहते हैं 'क्कोजाइय्नानियेङ्'। फूल उसके बहुत सुन्दर होते हैं। मगर यहाँ उसे बचा नहीं सकी।"

आज ही सवेरे सोहिनीने पतिकी लाइब्रेरीमें जाकर यह नाम पहले-पहल ढूँढ़ निकाला है। पौधा कभी आँखसे भी नहीं देखा उसने। विद्याका जाल फैलाकर विद्वानको खींचना चाहती है।

रेवती दंग रह गया सुनकर। उसने पूछा, "इसका लैटिन नाम क्या है, जानती हैं आप?"

सोहिनीने अनायास ही कह दिया, "मिलेटिया कहते हैं।" और बोली, "मेरे पति, कोई भी बात हो, सहजमें स्वीकार नहीं करते थे, फिर भी उनमें एक अन्ध-विश्वास था कि 'फल-फूलोंमें प्रकृतिका जो कुछ है सुन्दर है। स्त्रियाँ विशेष अवस्थामें उनकी तरफ एकान्त-रूपसे यदि मन दें, तो सन्तान अवश्य ही सुन्दर होगी।' इस बातको तुम मानते हो क्या?"

कहना व्यर्थ है कि यह मत नन्दकिशोरका नहीं था।

रेवतीने अपना सिर खुजलाते-हुए कहा, "यथोचित प्रमाण तो अभी तक नहीं मिले।"

सोहिनीने कहा, "कम-से-कम एक प्रमाण मुझे मिला है, अपने ही घरमें। मेरी लड़कीने ऐसा आश्चर्यजनक रूप पाया कहाँसे! वसन्तके नाना फूलोंकी मानो···खैर, मैं क्या कहूँ, खुद अपनी आँखोंसे देखते ही समझ जाओगे।"

देखनेके लिए उत्सुक हो उठा रेवती। नाटकका कोई भी सरंजाम बाकी नहीं छोड़ा था सोहिनीने।

सोहिनी अपने रसोइया-ब्राह्मणको सजा लाई है पुजारी-ब्राह्मणके वेशमें। वह पट्टवस्त्र पहने-हुए है, माथेपर तिलक है, चोटीमें बँधा-हुआ है फूल, और गलेमें है चमकता-हुआ सफेद जनेऊ।

सोहिनीने उसे अपने पास बुलाकर कहा, "महाराज, समय तो हो गया, अब नीलूको बुला लाइये-न।"

नीलाको वह स्टीम-रूममें हो बिठा आई थी। तय था कि बुलाये-जानेपर

वह डाली हाथमें लिये धीरे-धीरे चली आयेगी। और तब, कुछ देर मन देखा जा सकेगा उसे सवेरेकी धूप-छायामें।

इस बीचमें सोहिनी रेवतीको खूब अच्छी तरह देख लेने लगी। रंग चिकना-साँवला है जरा-सी पीली आभा लिये-हुए। ललाट चौड़ा है, और बाल उँगलियोंसे खिसका-खिसकाकर ऊपर कर लिये गये हैं। आँखें बड़ी तो नहीं किन्तु उनमें दृष्टिशक्तिका स्वच्छ प्रकाश चमचमा रहा है, सारे चेहरेमें उसीपर सबसे ज्यादा दृष्टि पड़ती है। मुँहका नीचेका घेरा स्त्रियों जैसा मालूम होता है मुलायम। रेवतीके सम्बन्धमें जितना तथ्य संग्रह किया है उसमें सोहिनीने विशेष लक्ष्य दिया है एक बातपर,—यह कि बचपनमें मित्रोंका उसपर था रोना-रूठना-मिश्रित सिण्टिमेण्टल प्रेम। उसके चेहरेपर जो एक तरहका दुर्बल माधुर्य था वह पुरुष-बालकोंके मनमें मोह खींच ला सकता था।

सोहिनीके मनमें खटका हो गया। उसकी धारणा है कि लड़कियोंके मनको लँगड़की तरह मजबूतीसे पकड़ रखनेके लिए पुरुषको 'देखनेमें-अच्छा' लगनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं ; और बुद्धि-विद्या भी गौण है। असल जरूरी चीज है पौरुषका मैग्नेटिज्म। वह उसकी स्नायुकी पेशियोंके भीतरकी बेतार-वार्ताके समान है, प्रकट होती रहती है कामनाकी अकथित स्पर्शके रूपमें।

याद उठ आई उसे अपनी प्राथमिक अवस्थाकी रसोन्मत्तताके इतिहासकी। उसने जिसे खींचा था अथवा जिसने उसे खींचा था, उसके न तो था रूप, न विद्या थी और न वंशगौरव। किन्तु, न-मालूम कौनसे एक अदृश्य तापका विकीरण था जिसके अलक्ष्य संस्पर्शसे उसने सम्पूर्ण देह-मनसे उसका अत्यन्त रूपसे अनुभव किया था पुरुषके रूपमें। 'नीलाके जीवनमें कब किस समय वैसा अनिवार्य आलोड़नका आरम्भ होगा' यह चिन्ता उसे स्थिर नहीं रहने देती। यौवनकी घोर-दशा ही सबसे ज्यादा विपत्तिकी दशा है, और अपनी उस अवस्थामें सोहिनी अपनेको बहुत-कुछ भूली-हुई थी निरपकारा ज्ञानकी चर्चामें। किन्तु दैवसे सोहिनीके मनकी जमीन थी स्वभावतः उर्वरा। पर जो ज्ञान नैर्व्यक्तिक है, सब लड़कियोंका उसपर खिंचाव नहीं होता। नीलाके मनमें प्रकाश पहुँचनेका कोई रास्ता ही न था।

नदीके घाटसे धीरे-धीरे आती दिखाई दी नीला। धूप पड़ रही है उसके माथेपर बालोंपर, और जरीकी रश्मियाँ झलमला रहीं हैं बनारसी-साड़ीपर।

रेवतीकी दृष्टिने एक क्षणमें उसे व्याप्त-रूपसे देख लिया। और दूसरे ही क्षण उसने आँखें नीची कर लीं। बचपनसे उसकी ऐसी ही शिक्षा है। जिस सुन्दरी तरुणीमें महामायाकी मनोहारिणी लीला चालू रहती उसे ओटमें छिपाये रखती उसकी बुआकी तर्जनी। इसीसे, जब कभी मौका मिलता है तब दृष्टिका अमृत उसे जल्दीसे एक घूँटमें निगल जाना पड़ता है।

मन-ही-मन रेवतीको धिक्कारकर सोहिनीने कहा, "देखो देखो, एक बार देखो तो सही!"

रेवती चौंककर निगाह उठाके देखने लगा नीलाको।

सोहिनीने कहा, "देखो तो, डाक्टर-आव्-सायन्स, उसकी साड़ीके रंगके साथ पत्तोंके रंगका कैसा सुन्दर मेल बैठा है!"

रेवतीने सङ्कोचके साथ कहा, "बहुत ही सुन्दर।"

सोहिनीने मन-ही-मन कहा, 'ऊँहुँक्, व्यर्थ है।' और बोली, "भीतरसे बसन्ती-रंग झाँक रहा है, और ऊपर है सब्ज-नीला रंग। बताओ तो किस फूलसे इसका रंग मिलता है?"

उत्साह पाकर रेवतीने खूब अच्छी तरहसे देखा, और कहा, "एक फूलकी याद आती है, किन्तु उसका ऊपरका आवरण ठीक नीला नहीं, ब्राउन है।"

"कौनसा फूल है बताना?"

रेवतीने कहा, "मेलिना"

"अच्छा, समझ गई। उसकी पाँच पँखड़ियाँ होती हैं, एक चमकीली पीली और बाकीकी चार काली।"

रेवती आश्चर्यसे दंग रह गया। बोला, "फूलोंकी इतनी जानकारी आपको कैसे हुई?"

सोहिनीने हँसते-हुए कहा, "होना उचित नहीं हुआ, बेटा! पूजाकी डालीसे बाहरके फूल हमारे लिए पर-पुरुषके समान ही हैं।"

डाली हाथमें लिये धीरे-धीरे आ पहुँची नीला।

उसकी माने कहा, "सिकुड़ी-सी होकर खड़ी क्यों रह गई। पाँव छूकर प्रणाम कर।"

"रहने दो, रहने दो।" – कहता-हुआ रेवती अस्थिर हो उठा। रेवती पालथी मारकर बैठा था, पाँव ढूँढ़ निकालनेमें नीलाको इधर-उधर टटोलना पड़ा। सिहर उठा रेवतीका सारा शरीर।

नीलाकी डालीमें थीं दुर्लभ-जातिकी ऑर्किडकी मञ्जरियाँ, और चाँदीकी थालीमें थीं बादामकी कतली, पिस्ताकी बरफी, 'चन्द्रपुली', गावेकी इमरती, मलाईके लड्डू, और बरफी-जैसे चौकोर टुकड़ोंमें कटा-हुआ 'भापा-दही'।

सोहिनीने कहा, "ये सब चीजें नीलाने अपने हाथसे बनाई हैं।"

बिलकुल झूठ बात है। इन सब कामोंमें नीलाका न तो कभी हाथ चला है, और न मन।

सोहिनी बोली, "जरा-कुछ मुँहमें डालना होगा, बेटा, तुम्हारे ही लिए बनाई गई हैं ये-सब चीजें घरमें।"

फरमाइश देकर बड़ेबाजारकी एक परिचित दूकानमें बनवाई गई हैं।

रेवतीने हाथ जोड़कर कहा, "इस समय कुछ खानेकी आदत नहीं मेरी। बल्कि आज्ञा दें तो घर ले जा सकता हूँ।"

सोहिनीने कहा, "अच्छी बात है। अनुरोध करके खिलाना-पिलाना मेरे पतिके सिद्धान्तके विरुद्ध है। वे कहा करते थे, आदमी कोई अजगरकी जात थोड़े ही है।"

एक बड़े टिफिन-कैरियरमें सोहिनीने सब चीजें सजाकर रख दीं। और नीलासे कहा, "दो तो, बेटी, डालीमें सब फूल सजा दो अच्छी तरह। एक जातके साथ दूसरी जातके फूल मिला मत देना। और अपने जूड़ेमें-लिपटा रेशमी रूमाल ढक देना डालीपर।"

विज्ञानीकी आँखोंमें कला-पिपासुकी दृष्टि उत्सुक हो उठी। यह जो प्राकृत जगत्‌के तौल-नापके बाहरकी चीज ठहरी। नाना रंगोंके फूलोंमें नीलाकी सुन्दर सुडौल उँगलियाँ जो सजानेकी लयके साथ नाना भङ्गियाओंमें चल रही

थीं, रेवतीके लिए उनपरसे दृष्टि हटाना मुश्किल हो गया। सीर्फ बीच-बीचमें वह नीलाके मुँहकी तरफ देख लेता है। एक तरफ उसके चेहरेकी सीमामें था मोती-चुन्नी-पन्नाके जड़ाऊ हारमें लिपटा-हुआ जूड़ेका इन्द्रधनुष, और दूसरी ओरकी सीमामें थी बसन्ती-रंगकी चोलीपर उभरी-हुई साड़ीकी रंगीन किनारी।

सोहिनी मिठाई सजा रही थी,– किन्तु उसका एक तृतीय नेत्र भी था। और सामने जो एक जादू चल रहा था उससे वह अनभिज्ञ नहीं थी।

अपने पतिके अनुभवके अनुसार सोहिनीकी धारणा थी कि विद्या-साधनाकी मेड़से-घिरा खेत हरएक जानवरके चरनेका खेत नहीं है। आज सोहिनीको आभास मिला कि वह मेड़ सबके लिए समान ठोस नहीं है ; और यह उसे अच्छा नहीं लगा।

६

दूसरे दिन सोहिनीने अध्यापकको बुलवा भेजा। और कहा, "अपनी गरजसे मैं आपको बुलाकर झूठमूठको तकलीफ दिया करती हूँ। शायद कामका भी हर्जा कराती हूँ।"

"दुहाई है तुम्हें, और भी जरा जल्दी-जल्दी बुलाया करो। जरूरत हो तो अच्छा ही है, न हो तो और भी अच्छा।"

"आपको मालूम है कि कीमती यन्त्र संग्रह करनेके नशेमें मेरे पतिको और-किसी बातका होश ही नहीं रहता था। मालिकोंको वे धोखा दे जाते थे अपने इस निष्काम-लोभसे। सारे एशियामें ऐसी 'लैबोरेटरी' कहीं भी न मिले, यह जिद उनकी तरह मेरे सरपर भी सवार हो गई ; और उस जिदने ही मुझे बचा रखा है, नहीं-तो मेरा मादक खून सड़-सड़कर झाग उगलता रहता चारों तरफ। देखिये, चौधरीजी, आप मेरे ऐसे बन्धु हैं जिनसे मैं बिना किसी संकोचके अपने स्वभावमें-लिपटी गन्दगीको भी कह सकती हूँ। अपने कलंककी दिशा दिखानेको खुला दरवाजा मिल जाता है तो मन साँस लेकर जी जाता है।"

चौधरीने कहा, "जो लोग सम्पूर्णताको देख सकते हैं उनके लिए सत्यको दबानेकी आवश्यकता नहीं होती। अर्ध-सत्य ही लज्जाकी वस्तु है। सम्पूर्ण देखनेकी ही प्रकृति है हमलोगोंकी, हमलोग विज्ञानी ठहरे।"

"वे कहा करते थे, 'मनुष्य प्राणोंकी बाजी लगाकर प्राण बचाना चाहता है, किन्तु प्राण तो बचते नहीं। इसीलिए, जीनेका शौक मिटानेके लिए वह ऐसी कोई चीज ढूँढ़ता फिरता है जो प्राणोंसे भी बहुत ज्यादा हो।' वह दुर्लभ वस्तु उन्हें मिल गई थी अपनी इस लैबोरेटरीमें। इसे अगर मैं जीवित न रख सकी तो उन्हें मैं चरम-रूपसे मारूँगी स्वामी-घातिनी होकर। इसके लिए मैं रक्षक चाहती हूँ, इसीसे ढूँढ़ रही थी रेवतीको।"

"कोशिश की थी?"

"की थी, हाथों-हाथ फलकी आशा भी है, पर अन्त तक टिकेगा नहीं।"

"क्यों?"

"उसकी बुआ ज्यों ही सुनेंगी कि रेवतीको मैं खींच रही हूँ अपने पास, त्यों ही वे उसे ले जानेके लिए दौड़ी चली आयेंगी। सोचेंगी, अपनी लड़की ब्याहनेके लिए मैं उसपर डोरे डाल रही हूँ।"

"इसमें दोष क्या है? ऐसा हो जाय तो अच्छा ही हो। लेकिन, तुम तो कह रही थीं कि अन्य जातिमें नहीं ब्याहोगी?"

"तब तक मैंने आपका मन नहीं पहचाना था, इसलिए झूठ कह दिया था। मेरी तो भीतरसे बहुत इच्छा थी रेवतीको लड़की ब्याहनेकी, किन्तु अब बिलकुल नहीं है।"

"क्यों?"

"समझ गई मैं, लड़की मेरी तोड़फोड़-प्रकृतिकी है। जो-कुछ भी उसके हाथ पड़ेगा उसे वह साबूत नहीं रखनेकी।"

"मगर वह है तो तुम्हारी ही लड़की।"

"है तो मेरी ही लड़की, इसीसे तो मैं उसकी नस-नससे वाकिफ हूँ।"

अध्यापकने कहा, "लेकिन इस बातको भी कैसे भुलाया जा सकता है कि नारी पुरुषमें इन्सपिरेशन जगा सकती है।"

"मुझे सब मालूम है। पुरुषकी खुराकमें आमिष तक तो चलाया जा सकता है, किन्तु, शराब चलाते ही सत्यानाश है। मेरी लड़की शराबकी सुराही है, ऊपर तक भरी-हुई!"

"तो क्या करना चाहती हो, बताओ?"

"मैं अपनी लैबोरेटरी दे जाना चाहती हूँ पब्लिकको।"

"अपनी एकमात्र कन्यासे बचाकर?"

"कन्याको? उसे दान करनेसे वह दान किस रसातलमें पहुँचेगा सो मैं नहीं कह सकती। मैं अपनी ट्रस्ट-सम्पत्तिका प्रेसिडेण्ट बना दूँगी रेवतीको। इसमें तो बुआको कोई आपत्ति नहीं हो सकती?"

"स्त्रियोंकी आपत्तिकी युक्तिका ही अगर ज्ञान होता तो पुरुष होकर पैदा ही क्यों होता? लेकिन, एक बात मेरी समझमें नहीं आ रही कि उसे अगर कमाई ही नहीं करना है, तो प्रेसिडेन्ट क्यों करना चाहती हो!"

"केवल यन्त्रोंसे क्या होगा! आदमी भी तो चाहिए उनमें प्राण भरनेवाला। एक बात और है, मेरे पतिकी मृत्युके बाद आज तक एक भी नया यन्त्र नहीं मँगाया गया है। रुपयोंकी कमीके कारण नहीं,–खरीदनेके लिए कोई लक्ष्य भी तो होना चाहिए सामने। मालूम हुआ है कि रेवती 'मैग्नेटिज्म'-सम्बन्धी खोज कर रहा है। मैं चाहती हूँ उस मार्गमें संग्रहको आगे बढ़ने दिया जाय,– चाहे जितना भी रुपया लगे, लगने दो।"

"अब मैं क्या कहूँ तुमसे! तुम अगर पुरुष होतीं तो मैं तुम्हें कँधेपर लेकर नाचता फिरता चारों तरफ। तुम्हारे पतिने रेल-कम्पनीका धन चुराया था, और तुमने चुरा लिया है उनके पुरुष-मनको। ऐसी अद्भुत कलमसे-जुड़ी बुद्धि मैंने और-कभी भी नहीं देखी। मेरी भी सलाह लेना तुम आवश्यक समझती हो, यही आश्चर्य है।"

"इसका कारण यह है कि आप बिलकुल सच्चे आदमी हैं, और ठीक बात कहना जानते हैं।"

"तुमने तो हँसा दिया मुझे। तुमसे बेठीक बात कहकर खामखा मैं फँसता फिरूँ, ऐसा ठोस मूर्ख मैं नहीं हूँ। – तो फिर जुट जाना चाहिए हमें

अब कामसे। चीज-वस्तकी फेहरिस्त बनाना, दामोंकी जाँच करना, अच्छे वकीलको बुलाकर तुम्हारे स्वत्वोंका विचार करना, नियम-कानून बनाना, इत्यादि बहुत बखेड़े हैं।"

"इन-सब कामोंका जिम्मा आपपर ही रहेगा। मैं कुछ नहीं जानती।"

"सो तो होगा नाममात्रको। खूब अच्छी तरह ही जानती हो तुम कि जैसा तुम कहोगी वैसा ही करूँगा मैं, जैसा तुम कराओगी वैसा ही करूँगा मैं। मेरे लिए भलाई बस इतनी ही है कि दोनों वक्त मुलाकात हुआ करेगी तुमसे। मैंने तुम्हें किन निगाहोंसे देखा है, सो तो तुम जानती नहीं।"

सोहिनी तपाकसे कुरसी छोड़कर उठ खड़ी हुई : और बड़ी फुरतीसे चौधरीके गलेसे लिपटकर चटसे उनका गाल चूमकर तुरत भले-मानसकी तरह अपनी कुरसीपर आकर बैठ गई।

"लो, सर्वनाशका खेल शुरू हो गया मालूम होता है!"

"इस बातका डर अगर जरा भी होता-न, तो आपके पास तक न फटकती मैं कभी।—इतना पुरस्कार तो आपको मिला करेगा कभी-कभी।"

"ठीक कहती हो!"

"हाँ, ठीक कहती हूँ। मेरा इसमें कोई खर्च नहीं, और आपका भी ऐसा कुछ ज्यादा पावना हो, चेहरेके भावसे तो नहीं मालूम पड़ता।"

"अर्थात्, तुम कहना चाहती हो कि यह सूखे-मरे काठपर कठफोड़ाका चोंच मारना है।—चल दिया मैं वकीलके घर।"

"कल एक बार आयेंगे-न, इस शुद्धतेमें?"

"क्यों, क्या करने?"

"रेवतीके मनमें चाभी भरने।"

"और अपना मन खोने?"

"मन क्या आपके अकेलेके ही है?"

"तुम्हारे मनका कुछ बाकी है क्या?"

"उच्छिष्ट बहुत पड़ा-हुआ है।"

"उससे अभी तो बहुतसे बन्दरोंको नचाया जा सकता है!"

७

रेवती उसके दूसरे दिन निर्दिष्ट समयके लगभग बीस मिनट पहले ही लैबोरेटरी देखने आ गया। सोहिनी तैयार नहीं थी। जल्दीसे रोजमर्राके मामूली कपड़े पहने ही उसे आना पड़ा रेवतीके सामने। रेवती समझ गया कि उससे गलती हुई है। वह बोला, "मेरी घड़ी ठीक नहीं चल रही मालूम होता है।"

सोहिनीने संक्षेपमें उत्तर दिया, "हाँ।"

इतनेमें जरा-सी कोई आवाज सुनकर रेवती मन-ही-मन चौंका, और दरवाजेकी तरफ देखने लगा। सुखन नौकर ग्लासकेसकी चाभियोंका गुच्छा लेकर भीतर आ रहा था।

सोहिनीने पूछा, "एक प्याला चाय मँगाऊँ क्या?"

रेवतीने सोचा कि कहना चाहिए, 'हाँ।' बोला, "क्या हर्ज है।"

बेचारेको चाय पीनेकी आदत नहीं थी। जुकाम होनेपर बिल्व-पत्रकी उकाली पिया करता है। मनमें उसके विश्वास था कि स्वयं नीला आयेगी चायका प्याला लेकर।

सोहिनीने पूछा, "कड़ी चाय पीते हो क्या तुम?"

चटसे वह कह बैठा, "हाँ।"

उसने सोचा कि ऐसे मौकेपर 'हाँ' कहना ही ठीक है। चाय आ गई, और वह कड़ी थी, इसमें सन्देह नहीं। स्याही-सा रंग और नीम-सी कड़ुई चाय लाया मुसलमान खानसामा। यह व्यवस्था भी उसकी परीक्षाके लिए थी। आपत्ति करनेको उसके मुँहसे कोई आवाज नहीं निकली। उसका यह संकोच अच्छा नहीं लगा सोहिनीको। उसने खानसामासे कहा, "चाय बनाके देते क्यों नहीं, मुबारक! ठण्डी हुई जा रही है जो।"

खानसामाके हाथकी चाय पीनेके लिए वह समयसे बीस मिनट पहले नहीं आया यहाँ।

कितने दुःखसे ओठोंसे चाय लग रही थी, अन्तर्यामी ही जान रहे थे,

और जान रही थी सोहिनी। हजार हो, आखिर है तो नारी ही। दुर्गति देखकर सोहिनीसे रहा नहीं गया। वह बोली, "इस प्यालेको रहने दो, दूसरे प्यालेमें दूध दिये देती हूँ, साथमें कुछ मिठाई और फल ले लो। सवेरे-सवेरे आये हो, शायद कुछ खा-पीकर नहीं आये होगे।"

बात सच थी। रेवतीने सोचा था कि आज भी गुलनिकुञ्ज-बगीचेकी पुनरावृत्ति होगी। किन्तु, उस दिनके किनारेसे भी नहीं निकली सोहिनी। बेचारेके मुँहमें रह गया कड़ी चायका कडुआ स्वाद, और मनमें जम बैठी आशा-भङ्गकी तीखी अनुभूति।

इतनेमें प्रवेश किया अध्यापकने। कमरेमें घुसते ही वे रेवतीकी पीठ ठोंकते-हुए बोले, "क्या रे, हो क्या गया तुझे! बिलकुल ठण्डा बर्फ-सा हो रहा है! बबुआ-सा बैठा-बैठा दूध पी रहा है टुरुर-टुरुर। चारों तरफ क्या कुछ देख रहा है, यह क्या खिलौनोंकी दुकान है? जिनके आँखें हैं उन्होंने देखा है कि महाकालके चेले लोग आया करते हैं यहाँ ताण्डवनृत्य करने।"

"ओ-हो, क्यों सुना रहे हैं उलटी-सीधी! बगैर खाये ही निकल पड़े थे घरसे सवेरे सवेरे। यहाँ आये तो चेहरा सूखा-हुआ-सा मालूम हुआ।"

"लो, यहाँ भी बुआ-दि-सेकेण्ड मिल गईं! एक बुआ लगायेंगी एक गालपर चपत तो दूसरी बुआ दूसरे गालपर जमा देंगी प्यारकी मिट्टी। बीचमें पड़कर लड़का बेचारा हो जायगा भीगी बिल्ली। असल बात क्या है जानती हो, लक्ष्मी जब स्वयं आती हैं अपनी गरजसे तब वे दिखाई नहीं देतीं, और जो लोग सात-सात मुल्क घूमकर उन्हें खोज निकालते हैं, पकड़ाई देती हैं वे उन्हींके हाथ। बिन-माँगे पानीके समान न-पानेका और कोई रास्ता ही नहीं। अच्छा, बताओ तो, मिसेस, जाने दो मिसेस-फिसेस, मैं तुम्हें सोहिनी ही कहा करूँगा, इसपर तुम चाहे नाराज होओ चाहे और कुछ।"

"भला मैं नाराज क्यों होने लगी! कहिये न, 'सोहिनी'। 'सुही' कहें तो और भी अच्छा लगेगा।"

"गुप्त बातको प्रकट-रूपसे कहता हूँ। तुम्हारे इस सोहिनी नामके साथ और-एक शब्दका मेल है, बहुत ही यथार्थ अर्थ है उसका। गवेरे सोतेमें

उठते ही मैं तो 'हिनी-हिनी किनी-किनी' की धुनमें उन दोनों शब्दोंको मिलाकर मन-ही-मन खँजरी बजाना शुरू कर देता हूँ।"

"कैमिस्ट्रीकी रिसर्चमें मेल करनेका आपको अभ्यास है जो, यह उसीका एक पुछल्ला है।"

"मेल मिलानेमें मरते भी हैं बहुतसे लोग। ज्यादा छेड़छाड़ करना भी ठीक नहीं,—घोरतर दाह्य पदार्थ है 'मेल'।"

इतना कहकर अध्यापक ठहाका मारकर हँस पड़े।

फिर बोले, "नहीं-नहीं, इस बच्चेके सामने इन सब बातोंकी आलोचना करना उचित नहीं। बारूदके कारखानेमें आज तक इसने ऐप्रेण्टिसी भी नहीं शुरू की। बुआका आँचल इसे रोके-हुए है, और यह है 'नॉनकमबस्टिब्ल'।"

रेवतीका स्त्रैण-चेहरा लाल-सुर्ख हो उठा।

"सोहिनी, मैं तुमसे पूछना चाहता था, आज सवेरे-सवेरे क्या तुमने इसे अफीम खिला दी है? ऐसा ऊँघ क्यों रहा है यह?"

"खिलाई भी हो तो यह अनजानमें।"

"रेवू, चल उठ, उठ यहाँसे! स्त्रियोंके सामने इस तरहसे मुँहचोर होकर नहीं रहना चाहिए। इससे इनलोगोंके दिमाग चढ़ जाते हैं। बीमारीकी तरह ये तो सिर्फ पुरुषोंकी कमजोरियाँ ही ढूँढ़ती फिरती हैं। छिद्र पाते ही टेम्परेचर बढ़ा देती हैं दन्नसे। यह सब्जेक्ट मुझे मालूम है, इसलिए लड़कोंको सावधान कर देना पड़ता है। मेरी तरह जिनपर चोट पड़ चुकी है और मरे नहीं हैं, उन्हींसे पाठ लेना चाहिए। रेवू, कुछ खयाल न करना, बस! जो लोग बात नहीं करते, चुप बने रहते हैं, वे ही सबसे बढ़कर भयङ्कर होते हैं। चल तो, तुझे लैबोरेटरी घुमा लाऊँ। वो देख, दो गल्वैनोमिटर हैं, एकदम लेटेस्ट। वो देख, हाई वैक्युअम पम्प, माइक्रोफोटोमिटर। यह परीक्षा पास करानेवाली कदली-काण्डकी नाव नहीं है। एक बार यहाँ आसन जमाकर बैठ तो तू, देखूँ। तेरा यह गंजी-खोपड़ीका प्रोफेसर, नाम नहीं लेना चाहता मैं उसका, देखूँ उसका मुँह इत्ता-सा निकल आता है या नहीं। जब तू मेरा छात्र था तब मैंने तुझसे नहीं कहा था कि तेरी नाकके सामने लटक रहा है

भविष्य ! लापरवाही करके उसे नष्ट मत कर देना। तेरी जीवनीके प्रथम अध्यायके एक कोनेमें मेरा नाम भी अगर छोटे अक्षरोंमें लिखा रहे, तो वही होगी मेरी गुरु-दक्षिणा।"

देखते-देखते विज्ञानी जाग उठा। चमक उठीं उसकी दोनों आँखें। चेहरा उसका एकदम भीतरसे बदल गया। क्षुब्ध हो गई सोहिनी। बोली, "तुम्हें जो-भी-कोई जानते हैं वे सभी लोग तुम्हारे विषयमें इतनी जबरदस्त उन्नतिकी आशा करते हैं जो रोजमर्राकी नहीं किन्तु चिरकालकी है। पर आशा जितनी बड़ी होती है उतनी ही बड़ी उसकी बाधा भी होती है भीतर और बाहर।"

अध्यापक चौधरीने रेवतीकी पीठपर फिर एक जबरदस्त थपका जमा दिया। झनझना उठी उसकी रीढ़। चौधरीने अपने भारी गलेसे कहा, "देख, रेवू, जिस महान् भविष्यका वाहन होना चाहिए था ऐरावतको, कंजूस-वर्तमान उसे चढ़ा देता है बैलगाड़ीपर, कीचड़में फँसकर वह पड़ा रह जाता है अचल होकर। – *सुनती हो, सोहनी, सुनी ? – नहीं नहीं, पीठ नहीं ठोकूँगा।* सच-सच बताना, बात मैंने कैसे अच्छे ढंगसे बनाकर कही है ?"

"बहुत सुन्दर !"

"इसे लिख रखो अपनी डायरीमें।"

"जरूर।"

"बातका अर्थ तो समझ गया-न, रेवी !"

"शायद समझ गया।"

"*याद रखना, विशाल प्रतिभाका दायित्व भी विशाल होता है।* यह तो किसीकी निजी चीज नहीं है। इसकी जिम्मेदारी है अनन्तकालके प्रति। सुन रही हो, सुही, सुन रही हो ? क्या बात कही है मैंने ?"

"बहुत ही अच्छी बात कही है। पुराने जमानेके राजा होते न अभी, तो गलेसे मोतियोंकी माला उतारकर –"

"*वे तो मर चुके सब, किन्तु –* "

"पर 'किन्तु' अभी नहीं मरा। याद रहेगी।"

रेवतीने कहा, "डरनेकी कोई बात नहीं, कोई बात मुझे दुर्बल नहीं कर सकती।" कहकर वह सोहिनीके पैर छूनेके लिए आगे बढ़ा। सोहिनीने जल्दीसे रोक दिया।

चौधरीने कहा, "अरे, किया क्या तुमने! पुण्यकर्म न करनेमें दोष है, और पुण्यकर्ममें बाधा देनेमें और भी अधिक दोष है।"

सोहिनीने कहा, "प्रणाम यदि करना ही हो तो वहाँ करो।"—कहते-हुए उसने वेदीपर रखी-हुई नन्दकिशोरकी मूर्ति दिखा दी। धूप जल रही थी वहाँ, और एक थालमें रखे-हुए थे बहुतसे फूल।

फिर बोली, "पतितोद्धारकी कथा पुराणोंमें पढ़ी है। मेरा उद्धार किया है इन्हीं महापुरुषने। बहुत नीचे उतरना पड़ा था, अन्तमें उठाके बिठा सके थे ये—पासमें कहनेसे मिथ्या कहना होगा—अपने चरणोंके नीचे। विद्याके मार्गमें मनुष्यके उद्धार करनेकी दीक्षा इन्हींने दी थी मुझे। कह गये हैं ये, लड़की जमाईका घमण्ड बढ़ानेके लिए उनके जीवनका खान-खोदकर-निकाला-हुआ रत्न मैं घूरेके ढेरमें न फेंक दूँ। और कह गये हैं, 'यहीं रखे जाता हूँ मैं अपनी सद्‌गति और अपने देशकी सद्‌गति'।"

अध्यापकने कहा, "सुन लिया-न, रेवू? यह होगी ट्रस्ट-सम्पत्ति, और तुमपर सौंपा जायगा इसका कर्तृत्व।"

रेवतीने जरा-कुछ चञ्चलताके साथ कहा, "कर्तृत्व लेनेके योग्य मैं नहीं हूँ। यह मुझसे नहीं होगा।"

सोहिनीने कहा, "नहीं होगा! छिः, यह क्या पुरुषों-जैसी बात हुई?"

रेवतीने कहा, "मैं हमेशासे विद्याभ्यास करता आया हूँ,—ऐसे कामोंका भार कभी नहीं लिया मैंने।"

चौधरीने कहा, "अण्डा फोड़नेके पहले कभी भी बतक तैरी नहीं, बादमें तैरती देखी गई है। तुम्हारा भी आज अण्डेका आवरण टूटेगा।"

सोहिनीने कहा, "डरो मत, मैं रहूँगी तुम्हारे साथ-साथ।"

रेवती आश्वस्त होकर चला गया।

सोहिनी अध्यापकके चेहरेकी तरफ देखती रही।

चौधरीने कहा, "दुनियामें बेवकूफ बहुत तरहके होते हैं,—उनमें पुरुष बेवकूफ ही सर्वश्रेष्ठ है। किन्तु यह याद रखना, दायित्व हाथमें लिये बगैर दायित्वकी योग्यता भी नहीं आती। मनुष्यको दो हाथ मिले हैं इसीलिए वह हुआ है मनुष्य। अगर उसे दो खुर और मिल जाते, तो, साथ-साथ मलने-लायक एक पूँछ भी निकल आती उसके। तुम्हें क्या रेखतोंमें हाथोंके बदले खुर दिखाई दे रहे हैं क्या?"

"नहीं मुझे अच्छा नहीं लग रहा है। औरतोंके हाथमें ही जो पले-पनपे हैं उनके दूधके दाँत कभी नहीं टूटते। भाग्य मेरा! आपके रहते-हुए मैंने और किसीकी बात सोची ही क्यों?"

"खुश हुआ सुनकर। जरा समझा तो दो, क्या गुण पाया मेरेमें?"

"लोभ नहीं है आपके मनमें जरा भी।"

"इतनी बड़ी निन्दा! लोभ-जैसी चीजका लोभ नहीं मुझे?—काफी है, बहुत है—"

मुँहकी बात छीनकर अध्यापकके दोनों गालोंपर दो चुम्बन जड़ दिये मोहिनीने, और तुरत हट आई अपनी जगहपर।

"किस खातेमें जमा हुआ यह, सोहिनी?"

"आपसे जो ऋण मिला है उसे तो मैं चुका नहीं सकती कभी, सिर्फ ब्याज देती जाती हूँ।"

"पहले दिन एक बार, और आज दो बार! बराबर इसी तरह वृद्धि होती रहेगी क्या?"

"सो तो होगी ही, ब्याज दर-ब्याज, चक्रवृद्धिके नियमसे।"

८

चौधरीने कहा, "क्यों सोहिनी, आखिर अपने पतिके श्राद्धमें तुमने मुझे पुरोहित बना ही डाला? बड़ी मुसीबत है, बड़ी-भारी जिम्मेदारी ठहरी, कैसे पार पड़ेगी! जिसका अस्तित्व टटोले भी नहीं मिलता उसे प्रसन्न करना! यह तो बँधे-दस्तूरकी दान-दक्षिणा नहीं, जो—"

"आप भी तो बँधे-दस्तूरके गुरु-पुरोहित नहीं हैं। आप जो-भी-कुछ करेंगे वही होगी विधि-पद्धति। दानकी व्यवस्था तैयार कर रखी है तो?"

"कई दिनोंसे मैं तो यही काम कर रहा हूँ। दुकान-बाजार भी मैं कम नहीं घूमा। दान-सामग्री सजाई जा चुकी है नीचेके बड़े कमरेमें। इहलोककी आत्माएँ जो उन्हें हड़पेंगी वे भर-पेट खुश होंगी, इसमें कोई सन्देह नहीं।"

चौधरीके साथ-साथ नीचे जाकर सोहिनीने देखा कि सायन्स-पढ़नेवाले विद्यार्थियोंके लिए तरह-तरहके यन्त्र, तरह-तरहके मॉडेल, नाना प्रकारकी पुस्तकें, माइक्रोस्कोपकी बहुत-सी स्लाइडें और बायोलॉजीके बहुत-से नमूने लाकर रखे गये हैं। और प्रत्येक चीजके साथ नाम और ठिकानाके कार्ड लगे-हुए हैं। ढाई-सौ विद्यार्थियोंके लिए चेक लिखे तैयार हैं साल-भरकी वृत्तिके। खर्चके विषयमें जरा भी कहीं कोई संकोच नहीं किया गया है। बड़े-बड़े धनी-मानियोंके श्राद्धमें जो ब्राह्मण-विदाई दी जाती है उससे इस दक्षिणाका खर्च बहुत ज्यादा है। किन्तु विशेष-रूपसे कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता इसका समारोह।

"पुरोहित-विदाईमें क्या दक्षिणा देनी होगी, सो तो आपने लगाई ही नहीं कहीं?"

"मेरी दक्षिणा है तुम्हारी प्रसन्नता।"

"प्रसन्नताके साथ-साथ आपके लिए रख रखा है मैंने यह क्रोनोमीटर। जर्मनीसे खरीदकर मँगवाया था इसे उन्होंने, बराबर यह उनके रिसर्चके काममें आता था।"

चौधरीने कहा, "जो भावना मनमें उठ रही है उसके लिए भाषा नहीं है। फालतू बात मैं कहना नहीं चाहता, मेरी पुरोहिताई आज सार्थक हुई।"

"और-एक आदमी है, आज उसे मैं भूल नहीं सकती,—हमारे यहाँका मानिक,—उसकी विधवा बहू है।"

"मानिक कौन?"

"वह था लैबोरेटरीका हेड-मिस्तरी। आश्चर्यजनक हाथ था उसका। बारीकसे बारीक काममें भी बाल-बराबर फर्क नहीं होता था, मशीन-पुर्जोंका

तत्त्व समझनेमें उसकी बुद्धि थी अभ्रान्त। उसे वे अति निकट-मित्रके समान देखते थे। गाड़ीमें बिठाकर ले जाते थे बड़े-बड़े कारखाने दिखानेके लिए। हालाँ कि वह था शराबी ; उसके नीचे काम करनेवाले 'छोटा-आदमी' समझ कर उसकी अवज्ञा करते थे। वे कहा करते थे, 'वह गुणी आदमी है, उसके ये गुण बनाये नहीं जा सकते, और न ढूंढ़े ही मिलेंगे कहीं।' उनकी दृष्टिमें उसका सम्मान काफी मात्रामें था। इसीसे आप समझ जायेंगे कि क्यों उन्होंने मुझे अन्त तक इतना सम्मान दिया। मेरे अन्दर जो मूल्य उन्होंने देखा था उसकी तुलनामें दोषका वजन उनकी दृष्टिमें था अत्यन्त सामान्य। जिस जगह मुक्त-जैसी 'पाई-चार्ज'पर वे असम्भव-रूपसे विश्वास करते थे उस जगह उनके उस विश्वासको मैंने जरा भी नष्ट नहीं किया। आज तक उसकी रक्षा कर रही हूँ प्राण-मनसे। इतना वे और किसीसे भी नहीं पाते थे। जहाँ मैं छोटी थी वहाँ उनकी नजरोंमें नहीं पड़ी मैं, किन्तु जहाँ मैं बड़ी थी वहाँ उन्होंने मुझे पूरा सम्मान दिया है। मेरा मूल्य अगर उनकी नजरोंमें न आता तो मैं किस रसातलमें बिला जाती, आप ही सोचिये। मैं बहुत बुरी हूँ, किन्तु मैं खुद ही कहती हूँ कि मैं बहुत अच्छी हूँ। अन्यथा मुझे वे किसी भी हालतमें सहन नहीं कर सकते थे।"

"देखो, सोहिनी, यह मैं अहङ्कारके साथ ही कहूँगा, मैंने शुरूसे ही जान लिया था कि तुम अच्छी हो। तुम गहरे दामकी अच्छी होनी तो कलङ्क लग जानेपर फिर उसका दाग नहीं छूटता।"

"कुछ भी हो, मुझे और-कोई आदमी चाहे जो भी समझता हो, स्वयं उन्होंने जो मान दिया है वह आज तक टिका-हुआ है, और मेरे जीवनके अन्तिम दिन तक टिका रहेगा।"

"देखो, सोहिनी, मैं तुम्हें जितना ही देख रहा हूँ उतना ही समझ रहा हूँ कि तुम उस जातिकी सहज स्त्री हो नहीं हो जो 'पति'-शब्द सुनते ही विगलित हो जाती हैं।"

"नहीं, सो मैं नहीं हूँ। मैंने देखी है उनके भीतरकी शक्ति, पहले ही दिनसे जान गई हूँ मैं कि वे आदमी हैं, मैं शास्त्र मिलाकर पतिभगावन नहीं

करने बैठी। मैं दावेके साथ ही कहती हूँ कि मेरे अन्दर जो रत्न है वह एकमात्र उन्हींके कण्ठ-हारमें लटकने-योग्य था, और-किसीके नहीं।"

इतनेमें नीला आ गई कमरेमें। बोली, "अध्यापकजी, कुछ खयाल न कीजियेगा, मासे मुझे कुछ बात करनी है।"

अध्यापकने कहा, "खयाल करनेकी कोई बात नहीं, बेटी, अब मैं जा रहा हूँ लैबोरेटरीमें। रेवती कैसा काम कर रहा है, देख आऊँ जाकर।"

नीलाने कहा, "कोई डरकी बात नहीं। काम अच्छा ही चल रहा है। मैंने किसी-किसी दिन खिड़कीके बाहरसे देखा, है,—वे सिर झुकाये लिखते ही रहते हैं, नोट लिखा करते होंगे। कभी-कभी दाँतोंमें कलम दबाकर सोचा भी करते हैं। मेरा तो वहाँ प्रवेश निषिद्ध है, इसलिए कि कहीं मेरे जरिये मर आइजकका ग्रैविटेशन हिल-डुल न जाय। उस दिन मा किसीसे कह रही थीं कि वे मैग्नेटिज्म-सम्बन्धी खोज कर रहे हैं, वहाँ किसीका गमनागमन होता है तो काँटा हिल जाता है, खासकर लड़कियोंके जानेसे।"

चौधरी ठहाका मारकर हँस पड़े। बोले, "देखो, लैबोरेटरी तो अपने भीतर ही है, मैग्नेटिज्म-सम्बन्धी काम तो वहाँ चला ही करता है, काँटेको जो हिला देती हैं उनसे डरना ही पड़ता है। दिग्भ्रम होनेका डर रहता है-न! तो अब मैं चल दिया।"

नीलाने अपनी मासे कहा, "मुझे अब और कितने दिन अपने आँचलमें बाँधके रखोगी, मा? रख तो सकोगी नहीं, सिर्फ दुःख ही पाओगी।"

"तू क्या करना चाहती है, बता?"

नीलाने कहा, "तुम्हें तो मालूम है, लड़कियोंके लिए एक हाइयर स्टडी मूवमेण्ट चालू हुआ है, तुम उसमें काफी रुपया भी दे चुकी हो। वहाँ मुझे किसी काममें क्यों नहीं लगा देतीं?"

"मुझे डर है, कहीं तू ठीकसे न चली तो?"

"सब तरहका चलना बन्द कर देना ही क्या ठीक चलनेका रास्ता है?"

"सो तो नहीं है, मुझे भी मालूम है, सोच तो इसी बातका है मुझे।"

"तुम खुद न सोचकर अब मुझे सोचने दो। आखिर तो सोचना पड़ेगा

मुझे ही। मैं अब दूध-पीती बच्ची तो हूँ नहीं। तुम सोचती हो कि इन-सब पब्लिक जगहोंमें तरह-तरहके आदमी आते-जाते हैं, इसलिए उसमें विपत्तिकी सम्भावना है। संसारमें आदमियोंका जाना-आना तो बन्द होगा नहीं तुम्हारे लिए। और न तुम्हारे हाथमें ऐसा-कोई कानून ही है कि तुम उनके साथ मेरे परिचयको बिलकुल रोक रखो।"

"जानती हूँ, सब जानती हूँ मैं। डरती भी हूँ कि इसके सब कारणोंको रोक नहीं सकती। — तो, तू उनलोगोंके हायर स्टडी सर्कलमें भरती होना चाहती है?"

"हाँ, चाहती हूँ।"

"अच्छा, ठीक है। वहाँके पुराने अध्यापकोंको एक-एक करके जहन्नुमका रास्ता दिखाके छोड़ेगी तू, मुझे मालूम है। तुझे सिर्फ एक वचन देना होगा मुझे। किसी भी हालतमें रेवतीके पास तू हरगिज नहीं फटक सकती। और न कभी किसी बहानेसे लैबोरेटरीमें हो जा सकती है।"

"मा, तुमने मुझे क्या समझ रखा है, मेरी कुछ समझमें नहीं आता। मैं फटकने जाऊँगी तुम्हारे उस ट्टपुँजिये सर आइजक न्युटनके पास! ऐसी ही रुचि है मेरी? — मर जानेपर भी नहीं।"

सङ्कोच अनुभव करनेपर रेवती अपने शरीरको लेकर जिस ढंगसे बगलें झाँकने लगता है उसकी नकल करते-हुए नीलाने कहा, "उस टाइपके पुरुषको लेकर मेरा काम नहीं चल सकता। जो लड़कियाँ बूढ़े-बच्चोंका लालन-पालन करना पसन्द करती हैं, तुम्हारे उस लल्लाको जिलाये रखना चाहिए उन्हींके लिए। वह मारनेके लायक शिकार ही नहीं।"

"जरा-कुछ बढ़ा-चढ़ाकर बात कर रही है, नीला! इसीसे डर लगता है कि यह ठीक तेरे मनकी बात नहीं है। और कोई बात नहीं, उसके सम्बन्धमें तेरे मनका भाव चाहे कुछ भी हो, अगर उसे तू मिट्टी करना चाहेगी तो वह तेरे लिए अच्छा नहीं होगा।"

"कब तुम्हारी क्या मर्जी होती है, कुछ समझमें नहीं आता, मा! उसके साथ मेरा ब्याह करनेके लिए तुम मुझे गुड़िया सजाके ले गई थीं सो

क्या मैं समझी नहीं थी ? इसीलिए क्या तुम मुझे उसके पास ज्यादा जाने-आनेकी मनाही कर रही हो कि कहीं अधिक परिचयकी रगड़ लगके पालिश न खराब हो जाय उसकी ?"

"देख, नीला, मैं तुझे यह पहलेसे कहे देती हूँ, तेरे साथ उसका ब्याह हरगिज नहीं हो सकता।"

"तो फिर, मैं अगर मोतीगढ़के राजकुमारसे ब्याह करना चाहूँ ?"

"मरजी हो तो कर लेना।"

"उसमें एक सुभीता यह है कि उसके तीन ब्याह हो चुके हैं। मेरी जिम्मेदारी बहुत-कुछ हलकी रहेगी। और फिर वह शराब पीकर नाइट-क्लबोंमें लड़खड़ाता रहता है,—उस समय भी मुझे फुरसत मिला करेगी।"

"अच्छा, ठीक है, जैसी तेरी मरजी। किन्तु रेवतीके साथ तेरा ब्याह मैं हरगिज नहीं होने दूँगी।"

"क्यों, तुम्हारे उस सर आइजक न्युटनकी बुद्धिमें मैं क्या भाँग घोल दूँगी ?"

"बस, बहसकी जरूरत नहीं। जो कह दिया है उसे याद रख !"

"वे खुद ही अगर कंगलापन करें तो ?"

"तो उसे यह मुहल्ला छोड़ना पड़ेगा,—फिर तू अपने अन्नसे उसे पालना-पोसना। तेरे बापके रुपयोंमेंसे उसे एक कौड़ी भी नहीं मिलेगी।"

"गजब रे गजब ! तब तो दूरसे ही नमस्कार है सर आइजकको।"

उस दिनकी बातचीत यहीं खतम हो गई।

६

"चौधरी साहब, और-तो सब ठीक चल रहा है। लेकिन, लड़कीकी दुश्चिन्ता मुझे खाये जा रही है। वह किधर किस ताकमें फिर रही है, क्या कर रही है, मेरी कुछ समझमें नहीं आता।"

चौधरीने कहा, "और फिर उसके पीछे कौन किस ताकमें फिर रहा है, यह भी तो चिन्ताका विषय है। हुआ क्या, इधर कुछ दिनोंसे चारों तरफ

एक ही अफवाह फैली-हुई है कि लैबोरेटरीकी रक्षाके लिए तुम्हारे पति अथाह रुपया छोड़ गये हैं। लोगोंकी जबानोंपर उसकी संख्या बढ़ती ही चली जा रही है। अब तो यह हालत है कि राज्य और राजकन्याके विषयमें बाजारमें फाटकेबाजी शुरू हो गई है।"

"राजकन्या मिट्टीके मोल बिकेगी, इसका तो मुझे पक्का भरोसा है। किन्तु मेरे जीते-जी राज्य सस्तेमें नहीं बिक सकता।"

"किन्तु लोगोंका आयात जो शुरु हो गया है! उस दिन अचानक मैं देखता क्या हूँ कि हमारे ही यहाँके अध्यापक मजुमदार सिनेमासे निकल रहे हैं, नीलाके साथ, हाथोंमें हाथ डाले! मुझे देखते ही गरदन फेर ली दूसरी तरफ। लड़का अच्छे-अच्छे विषयोंपर लेक्चर देता फिरता है,—देश-हितके विषयमें तो उसकी वाणी खिलने लगती है अनायास ही! किन्तु उस दिन उसकी टेढ़ी गरदन देखकर स्वदेशके लिए मुझे चिन्ता होने लगी है।"

"चौधरी साहब, छुड़का तो टूट चुका।"

"सो तो टूट चुका। अब इस गरीबको भी अपना थाली-लोटा सम्हालना पड़ेगा।"

"मजुमदारोंके मुहल्लेमें महामारी चलती है तो चलने दो,—मुझे डर है रेवतीका।"

"फिलहाल कोई डर नहीं। गहराईमें डूबा-हुआ है वह। अच्छा काम कर रहा है।"

"सब ठीक है, चौधरी साहब, किन्तु एक जगह जो वह घोर अनाड़ी है। सायन्समें भले ही वह उस्ताद हो, किन्तु, जिसे तुम 'मेट्रियार्की' कहते हो, उस राज्यमें उसके लिए जबरदस्त खतरा है।"

"तुम्हारा कहना ठीक है। उसे एक बार भी 'टीका' नहीं दिया गया। छूत लगनेपर बचाना कठिन हो जायगा।"

"रोज एक बार आपको देख आना पड़ेगा उसे।"

"किन्तु, और-कहींसे यह छूत न ले आवे! आखिर इस उमरमें मुझे न बेमौत मरना पड़े! डर मत जाना, हो तो आखिर स्त्री ही, फिर भी आशा

करता हूँ कि हँसी-मजाक शायद समझ सकती हो। मैं तो पार हो आया हूँ एपिडेमिकका मुहल्ला। अब छू जानेपर छूत नहीं लगेगी। लेकिन सामने एक मुश्किल आ खड़ी हुई है। परसों मुझे जाना पड़ेगा गुजरानवाला।"

"यह भी मजाक है क्या? स्त्री-जातिपर दया कीजियेगा।"

"मजाक नहीं है। मेरे सहपाठी अमूल्यचरण अड्डी थे वहाँके डाक्टर। बीस-पचीस सालसे वहाँ प्रैक्टिस कर रहे थे। कुछ सम्पत्ति भी इकट्ठी की थी। अचानक स्त्री-पुत्रोंको छोड़कर मर गये वे हार्ट-फेल करके। देन-लेन सब चुकाकर जमीन-जायदाद सब बेचकर उनलोगोंको उद्धार करके ले आना पड़ेगा यहाँ। कितने दिन लगेंगे, ठीक नहीं कह सकता।"

"इसपर तो कुछ कहा नहीं जा सकता।"

"इस संसारमें कहा तो किसीपर भी कुछ नहीं जा सकता, सोहिनी! निर्भय होकर कहो, 'जो होगा ही, वह हो।' जो लोग भाग्य मानते हैं वे गलती नहीं करते। हम सायन्टिस्ट भी तो कहते हैं, अनिवार्यमें एक बाल-बराबर भी फर्क नहीं आ सकता। जब तक कुछ करनेका हो, करो। जब किसी भी तरह कुछ न कर सको, तो बोलो, बस।"

"अच्छा, ठीक है।"

"जिस मजुमदारकी बात मैंने कही है वह उतना खतरनाक नहीं उस दलमें। दलवाले उसे अपने गुटमें मिलाये रखते हैं इज्जत बचानेकी गरजसे। और-और जिन लोगोंकी बात सुनी है, चाणक्यके मतानुसार उनसे सौ हाथ दूर रहनेपर भी, चिन्ताका कारण बना ही रह जाता है। अटर्नी हैं एक बाँकेबिहारी, उसका आश्रय लेना और 'आक्टोपस' के साथ आलिङ्गन-पाशमें आबद्ध होना एक ही बात है। धनी विधवाका गरमा-गरम खून उनलोगोंको बहुत पसन्द है। एक खबर सुन रक्खो पहलेसे, अगर कुछ करनेका हो तो करना। और अन्तमें मेरी फिलॉसाफी भी याद रखना।"

"देखिये, चौधरी साहब, रखिये आप अपनी फिलॉसाफीको। मैं नहीं मानूँगी आपके अदृष्टवादको। नहीं मानूँगी मैं आपके कार्य-कारणके अमोघ विधानको, अगर मेरी लैबोरेटरीपर किसीका हाथ पड़ा। मैं पंजाबी औरत

"उन निःस्वार्थियोंने तुझे यह भी जता दिया होगा कि पिताकी छोड़ी-हुई सम्पत्तिमें तेरे लिए जो रुपया है उसे तू अपनी इच्छानुसार खर्च कर सकती है?"

"हाँ, जता दिया है।"

"और मेरे कानमें यह भी भनक पड़ी है कि उनके वसीयतनामेकी 'प्रोबेट' लेनेके लिए तुम सब मिलकर कोशिश कर रहे हो। क्या यह सच है?"

"हाँ, सच है। बाँके-बाबू मेरे सॉलिसिटर हैं।"

"उन्होंने तुम्हें और-भी कुछ आशा और परामर्श दिया है?"

नीला चुप रह गई।

"तुम्हारे बाँके-बाबूको मैं सीधा कर दूँगी अगर मेरी सरहद्दमें उन्होंने कदम रक्खा। कानूनसे हुआ तो कानूनसे, नहीं-तो गैर-कानूनसे,- समझीं! जाते वक्त मैं पेशावर होकर जाऊँगी। लैबोरेटरीमें दिन-रात पहरा देनेके लिए मैं चार सिख-सिपाहियोंको तैनात किये जाती हूँ। और जाते समय यह भी तुम्हें दिखाती जाती हूँ कि मैं पंजाबकी लड़की हूँ।"

इतना कहकर उसने कमरबन्दमेंसे छुरी निकालकर दिखाई, और कहा, "यह छुरी न-तो लड़कीको जानती है, और न लड़कीके सॉलिसिटरको! समझीं! इसकी स्मृति छोड़े जाती हूँ तुम्हारे जुम्मे। वापस आकर अगर हिसाब लेनेका वक्त आया तो हिसाब लूँगी, छोड़ूँगी नहीं।"

११

लैबोरेटरीके चारों तरफ बहुतसी खुली जमीन है, किसी तरहका कम्पन या कोई शब्द लैबोरेटरीके काममें यथासम्भव बाधा न पहुँचा सके, इसीके लिए व्यवस्था है यह। यह निस्तब्धता कामके अभिनिवेश या तन्मयतामें रेवतीको सहायता पहुँचाती है। इसीसे वह अकसर यहाँ रातको काम करने आता है।

नीचेकी घड़ीमें दो बज गये। रेवती खिड़कीके बाहर आकाशकी तरफ दृष्टि किये क्षण-भरके लिए अपने विषयकी विचार-धारामें तल्लीन था।

इतनेमें, दीवारपर एक छाया आ पड़ी किसीकी। मुँह फेरकर देखा तो नीला है! रातकी पोशाकमें, महीन सिल्ककी ढीली कमीज और साया पहने हुए। रेवती चौंककर कुरसीसे उठके खड़ा हो रहा था कि इतनेमें नीला उसके गलेमें बाँह डालती-हुई उसकी गोदमें आ बैठी। रेवतीका सारा शरीर थरथर काँपने लगा, और कलेजा ऊपरको आने लगा। गद्गद-कण्ठसे कहने लगा, "तुम जाओ, जाओ इस कमरेसे, चली जाओ।"

नीलाने कहा, "क्यों?"

रेवतीने कहा, "मुझसे सहा नहीं जा रहा है। क्यों आई तुम यहाँ?"

नीलाने उसे और भी जोरसे दबाते-हुए कहा, "क्यों, मुझे क्या तुम प्यार नहीं करते?"

रेवतीने कहा, "करता हूँ, करता हूँ, करता हूँ। पर यहाँसे तुम जाओ।"

सहसा भीतर चला आया पंजाबी पहरेवाला। तिरस्कारके स्वरमें उसने कहा, "बाईजी, बहुत शरमकी बात है। आप निकल जाइये यहाँसे।"

रेवतीने चेतन-मनके अगोचरमें बिजलीकी घंटीका बटन कब दबा दिया, उसे पता नहीं।

पंजाबी सिपाहीने रेवतीसे कहा, "बाबू सा'ब, बेईमानी मत करो।"

रेवती नीलाको जबरदस्ती ढकेलकर कुरसीसे उठ खड़ा हुआ।

दरवानने फिर नीलासे कहा, "आप बाहर जाइये, नहीं-तो हमको अपनी मालिकिनका हुकम तामील करना पड़ेगा।"

अर्थात्, जबरदस्ती बेइज्जतीके साथ निकाल बाहर करेगा वह उसे।

बाहर जाते-जाते नीलाने कहा, "सुनते हैं, सर आइजक न्युटन! कल हमारे घर आपका चायका निमन्त्रण रहा, करेक्ट टाइम चार बजके पैंतालीस मिनटपर। सुन रहे हैं? बेहोश हो गये क्या?"—कहती-हुई वह फिर एक बार उसकी तरफ मुड़कर खड़ी हो गई।

बाष्पसे भीगे कण्ठसे उत्तर आया, "सुन लिया।"

रात-पोशाकके भीतरसे नीलाके सुडौल सुन्दर बदनका गठन संगमरमरकी मूर्तिके समान नयनाभिराम-रूपसे प्रस्फुटित हो उठा था। और रेवतीकी मुग्ध

आँखें उसे देखे बगैर न रह सकीं। नीला चली गई। रेवती टेबिलपर मुँह रखकर पड़ा रहा। ऐसे आश्चर्यजनक सौन्दर्यकी यह कल्पना नहीं कर सकता। एक प्रकारका विद्युत्-घर्षण प्रवेश कर गया उसकी नस-नसमें, और वह चकित-हुआ चक्कर काटने लगा अग्नि-धारामें। हाथकी मुट्ठियाँ बाँधकर रेवती बार-बार कहलाने लगा अपनेसे, 'कल चायके निमंत्रणमें नहीं जाऊँगा।' यही कड़ी शपथ करना चाहता है, किन्तु मुँहसे कुछ निकलता नहीं। अन्तमें ब्लाटिंग-पैडपर लिखने लगा, 'नहीं जाऊँगा, नहीं जाऊँगा, नहीं जाऊँगा।' सहसा देखा कि उसकी टेबिलपर एक गहरे लाल रंगका रेशमी रूमाल पड़ा है, उसके एक कोनेपर सूतसे कढ़ा है 'नीला'। रूमाल उसने अपने मुँहपर दबा लिया, सुगन्धसे मगज भर गया, एक नशा-सा सरसराता-हुआ फैल गया उसके सारे शरीरमें।

नीला फिर कमरेमें आ गई। बोली, "एक काम है,—भूल गई थी।"

दरवानने रोकनेकी कोशिश की। नीलाने कहा, "डरो मत तुम! मैं चोरी करने नहीं आई।" और फिर रेवतीसे बोली, "सिर्फ एक साइन चाहिए, जागरण-क्लबका प्रेसिडेण्ट बनाना है तुम्हें,—तुम्हारा नाम है देश-भरमें।"

रेवती अत्यन्त सङ्कुचित होकर बोला, "उस सम्बन्धके विषयमें मैं तो कुछ जानता नहीं।"

"कुछ भी जाननेकी जरूरत नहीं। इतना जाननेसे ही काम चल जायगा कि ब्रजेन्द्र-बाबू उस क्लबके पेट्रोन हैं।"

"मैं तो ब्रजेन्द्र-बाबूको नहीं जानता।"

"इतना जानना ही काफी है कि मेट्रोपोलिटन-बैङ्कके डिरेक्टर हैं वे। मेरे प्यारे होन, मेरे कण्ठकी सौगन्द है,—एक साइन ही तो करना है।"

इतना कहकर नीलाने अपना दाहना हाथ रेवतीके कंधेपरसे घुमाकर उसका हाथ पकड़कर कहा, "करो साइन।"

रेवतीने स्वप्नाविष्टकी भाँति कर दी साइन।

कागज लेकर नीला जब उसे तह करने लगी, तो दरवानने कहा, "यह कागज हमको दिखाना होगा।"

नीलाने कहा, "इसे तो तुम समझोगे नहीं।"

दरवानने कहा, "जरूरत नहीं समझनेकी।" और कागज छीनकर उसने उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। बोला, "दस्तावेज बनाना हो तो बाहर जाकर बनाओ। यहाँ नहीं।"

रेवती मन-ही-मन साँस लेकर जी गया। दरवानने नीलासे कहा, "अब चलो, बाईजी, आपको घर पहुँचा दूँ।" और नीलाको वहाँसे ले गया।

कुछ देर बाद फिर भीतर आया वह पंजाबी पहरेदार। बोला, "चारों तरफसे सब दरवाजे बन्द रखते हैं हम, फिर वो भीतर कैसे आ जाती है? आप खोल देते हैं मालूम होता है?"

यह कैसा सन्देह! इतना अपमान! रेवतीने बार-बार कहा, "मैंने नहीं खोला।"

"तो फिर वो आई कैसे भीतर?"

बात तो ठीक है। वैज्ञानिकजी तथ्यकी खोज करने लगे चारों तरफ घूम-घूमकर। अन्तमें देखा कि सड़ककी तरफकी एक खिड़की, जो भीतरसे बन्द रहती है, दिनमें किसी समय उसका हुड़का खुला छोड़ दिया था किसीने।

रेवतीमें ऐसी धूर्त-बुद्धि हो सकती है, इतनी श्रद्धा उसके प्रति नहीं थी दरवानकी। वह समझता था कि बेवकूफ आदमी है, पढ़ता-लिखता है, बस इतनी ही ताकत है उसमें। आखिर दरवानने कपारपर हाथ ठोंकते-हुए कहा, "औरनकी जात है, बाबू, बड़ी शैतान जात है।"

थोड़ी-बहुत रात जो बाकी थी, उसमें रेवती बार-बार अपनेसे कहलाता रहा, वह चायके निमन्त्रणमें नहीं जायगा।

कौए बोल उठे। रेवती घर चला गया।

१२

दूसरे दिन देखा गया कि समयकी पाबन्दीमें रेवतीने जरा भी ढील नहीं की। चायकी सभामें वह ठीक चार बजके पैंतालीस मिनटपर पहुँच गया। उसने सोचा था कि सभा एकान्तमें होगी, उन्हीं दोनोंको लेकर।

फैशनेबल पोशाकपर उसका कोई दखल नहीं था। धोती-कुरता पहनके आया है, और कंधेपर डाल रखी है तह-की-हुई एक चद्दर। यहाँ आकर उसने देखा कि सभा बैठी है बगीचेमें, अपरिचित शौकीन आदमियोंकी भीड़ है। भीतरसे उसका कलेजा बैठ गया, कहीं छिप सके तो जी जाय। एक कोनेमें बैठनेकी कोशिश करते ही, मानो उसके सम्मानमें, सबके सब उठके खड़े हो गये। बोले, "आइये, आइये, डॉक्टर भट्टाचार्य, आपका आसन यहाँ है।"

एक ऊँची-पीठकी मखमल-मढ़ी कुरसी थी सभाके ठीक बीचों-बीच। नीलाने आगे बढ़कर उसके गलेमें माला पहना दी, और ललाटपर लगा दिया चन्दनका तिलक।

ब्रजेन्द्र-बाबूने प्रस्ताव किया कि डॉक्टर भट्टाचार्यको सभापतिके पदपर अभिषिक्त किया जाय। समर्थन किया बाँके-बाबूने। चारों तरफसे तालियाँ गड़गड़ा उठीं। साहित्यिक हरिदास बाबूने डॉक्टर भट्टाचार्यकी अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिपर एक संक्षिप्त किन्तु सारगर्भ भाषण दिया। कहा, "रेवती-बाबूके नामके पालकी सहायतासे हमारी जागरण-समितिकी तरणी पश्चिमी महासमुद्र पार करके जागरणका सन्देश पहुँचायेगी विश्वके कोने-कोनेमें।"

सभाके व्यवस्थापकोंने रिपोर्टरोंके कानोंमें जाकर कहा, "रिपोर्टमें उपमाएँ सब जरूर लिखियेगा, कोई छूट न जाय।"

वक्तागण उठ-उठके जब कहने लगे कि 'इतने दिन बाद डॉक्टर भट्टाचार्यने भारत-माताके ललाटपर विज्ञानका जय-तिलक अङ्कित कर दिया', रेवतीकी तब छाती फूल उठी, अपनेको प्रकाशमान देखा उसने सभ्य-जगत्के मध्य-गगनमें। जागरण-समितिके विषयमें उसने जो-कुछ दागी बातें सुनी थीं मन-ही-मन प्रतिवाद करने लगा वह उनका। हरिदासबाबूने जब कहा, 'रेवती बाबूके नामका कवच रक्षा-कवचके रूपमें पहनाया जाता है आज इस समितिके गलेमें, इसीसे समझ सकते हैं कि इस समितिका उद्देश्य कितना महान् है', तब रेवती अपने नामका गौरव और दायित्व अत्यन्त प्रबल रूपसे अनुभव करने लगा। उसके मनसे संकोचकी केंचुली उतर गई। तरुणियाँ अपने मुँहकी सिगरेट हाथकी उँगलियोंमें धारण करके झुक पड़ीं रेवतीकी कुरसीपर,

और मधुर हास्यके साथ बोलीं, "परेशान कर रही हैं हम आपको, पर एक ऑटोग्राफ तो आपको देना ही पड़ेगा।"

रेवतीको ऐसा लगा कि मानो इतने दिन वह किसी स्वप्नमें था, और अब स्वप्नका कोष फट गया है और तितली बाहर निकल आई है।

एक-एक करके सब लोग चले गये।

नीलाने रेवतीका हाथ मसकते-हुए कहा, "आप मत जाइये।"

ज्वालामय मदिरा उँड़ेल दी उसने रेवतीकी नसोंमें।

दिनका उजाला खतम हो चला है, लता-वितानमें हरा प्रदीप-अन्धकार छा गया है।

वेंचपर दोनों जने पास-पास बैठ गये। अपने हाथपर रेवतीका हाथ रखते-हुए नीलाने कहा, "डॉक्टर भट्टाचार्य, आप पुरुष होकर स्त्रियोंसे इतने डरते क्यों हैं?"

रेवतीने स्पर्धाके साथ कहा, "डरता हूँ? हरगिज नहीं।"

"मेरी मासे आप नहीं डरते?"

"डरने क्यों लगा, श्रद्धा करता हूँ।"

"मुझसे।"

"जरूर डरता हूँ।"

"यह अच्छी खबर है। मा कहती हैं कि मेरे साथ आपका व्याह वे हरगिज न होने देंगी। ऐसा हुआ तो, मैं तो आत्महत्या कर लूँगी।"

"किसी भी बाधाको मैं नहीं मानूँगा। हमारा व्याह होकर रहेगा।"

रेवतीके कँधेपर माथा रखकर नीलाने कहा, "तुम शायद नहीं जानते कि मैं तुम्हें कितना चाहती हूँ।"

नीलाके माथेको और-भी अपनी छातीके पास खींचते-हुए रेवती बोला, "ऐसी कोई शक्ति हो नहीं जो तुम्हें मेरे पाससे छीन सके।"

"जाति?"

"बहा दूँगा जातिको।"

"तो रजिस्ट्रारके पास कल ही नोटिस देना होगा।"

रेवतीने सिर हिलाते-हुए कहा, "इसको भाषामें बहुत ज्यादा रंग चढ़ा दिया है। इतना बढ़ा-चढ़ाकर कहनेमें शरम आयेगी मुझे।"

"भाषाके तुम बड़े-भारी समझदार हो-न! यह तो केमिस्ट्रीका फारमूला नहीं है,—ऊहापोह मत करो, कण्ठस्थ कर डालो। मालूम है किसने लिखा है यह? इसके लिखनेवाले हैं हमारे साहित्यिक प्रमदारंजन बाबू।"

"ये सब इतने बड़े-बड़े वाक्य और बड़े-बड़े शब्द, इनका कण्ठस्थ करना मेरे लिए बहुत ही कठिन है।"

"काहेका कठिन है! कुछ नहीं। तुम्हारे आगे पढ़ते-पढ़ते मुझे तो साराका सारा याद हो गया है, 'मेरे जीवनके सर्वोत्तम शुभ-मुहूर्तमें जागरण-समितिने मुझे जो अमरावतीकी मन्दार-मालासे समलंकृत किया है',—फ्रेन्ड! तुम डरो मत। मैं तो तुम्हारे पास ही बैठी रहूँगी, धीरे-धीरे तुम्हें बताती रहूँगी।"

"साहित्यिक भाषा मुझे अच्छी आती नहीं, किन्तु फिर भी मुझे कैसा तो लगता है, मालूम होता है सारीकी सारी लिखावट मेरा मजाक उड़ा रही है। अंग्रेजीमें अगर कहने दो, तो मेरे लिए बड़ा आसान होगा। Dear friends, Allow me to offer you my heartiest thanks for the honour you have conferred upon me on behalf of the Jagarana-Club, the great Awakener इत्यादि,—बस ऐसे दो-चार सेन्टेन्स कह देना ही काफी—"

"नहीं नहीं, सो नहीं होगा,—तुम्हारे मुँहसे बंगला बहुत अच्छी लगेगी। जहाँ यह है-न, 'हे बंग-प्रदेशके तरुण-सम्प्रदाय, हे स्वाधीनता-संचालन-रथके सारथी, हे छिन्नशृङ्खल-परिकीर्ण पथके अग्रणीवृन्द',—कुछ भी कहो, अंग्रेजीमें भला ये सब बातें आ सकती हैं! तुम-जैसे विज्ञान-विशारदके मुँहसे जब यह सुनेंगे-न, तो तरुण बंगाल सर्पकी तरह फन उठाकर हिलने लगेगा। अभी काफी समय है,—पढ़ो पढ़ो, मैं भी साथ-साथ पढ़ती हूँ।"

इतनेमें, अपने भारी-भरकम लम्बे शरीरको सीढ़ियोंपरसे आवाजके साथ वहन करते-हुए बैंकके मैनेजर अजेन्द्र हालदार सूट मचामचाते-हुए सादर्या

पोशाकमें कमरेमें दाखिल हुए। बोले, "ओह, अब तो असह्य है, जब भी आता हूँ, तुम्हें नीलापर दखल जमाये बैठा पाता हूँ। काम नहीं, धन्धा नहीं, नीलाको अलग कर रखा है हमलोगोंसे काँटोंके घेरेकी तरह।"

रेवती सङ्कुचित होकर बोला, "आज मुझे एक विशेष काम है, इसीसे-"

"काम तो है ही, इसी भरोसेपर तो आया ही था।–आज तुमने न्योता दिया है सदस्योंको। व्यस्त होगे, यह जानकर ही आज आफिस जानेके पहले आध-घंटेका समय निकालकर जल्दी-जल्दी चला आ रहा हूँ। आते ही सुन रहा हूँ, यहीं ये काममें बँध गये हैं। आश्चर्य है। काम न रहे तो यहीं इनकी छुट्टी है, और काम रहे तो यहीं इनका काम है! ऐसे कभी पीढ़ा-न-छोड़नेवालोंके साथ हम कामवाले कैसे होड़ कर सकते हैं! नीली, is it fair?"

नीलाने कहा, "डॉक्टर भट्टाचार्यमें दोष यह है कि ये असल बातको जोरके साथ नहीं कह सकते। 'काम है इसलिए ये आये हैं', यह फालतू बात है। 'आये बिना रहा नहीं गया' इसलिए आये हैं। यह एक सुनने-लायक बात है और सच है। मेरे सारे समयपर इन्होंने दखल जमा रखा है अपनी जिदके जोरसे। यही तो इनका पौरुष है! तुम-सबोंको यहाँ इस ईस्ट-बंगालीके आगे हार माननी पड़ेगी।"

"अच्छी बात है, तो फिर हमें भी पौरुषका सञ्चालन करना पड़ेगा। अबसे जागरण-क्लबके मेम्बर लोग नारी-हरणकी चर्चा शुरू कर देंगे। जाग उठेगा पौराणिक युग!"

नीलाने कहा, "बड़ा मजा आ रहा है सुननेमें। नारी-हरण पाणि-ग्रहणसे अच्छा है। किन्तु पद्धति कैसी होगी?"

हालदारने कहा, "अभी दिखा सकता हूँ।"

"अभी?"

"हाँ, अभी।"

कहके तुरत उसने अपने दोनों हाथोंपर उठा लिया नीलाको सोफेपरसे। नीला चीखती-हँसती-हुई उसके गलेसे लिपट गई।

रेवतीने सिर हिलाते-हुए कहा, "इसकी भाषामें बहुत ज्यादा रंग चढ़ा दिया है। इतना बढ़ा-चढ़ाकर कहनेमें शरम आयेगी मुझे।"

"भाषाके तुम बड़े-भारी समझदार हो-न! यह तो केमिस्ट्रीका फारमूला नहीं है,— ऊहापोह मत करो, कण्ठस्थ कर डालो। मालूम है किसने लिखा है यह? इसके लिखनेवाले हैं हमारे साहित्यिक प्रमदारंजन बाबू।"

"ये सब इतने बड़े-बड़े वाक्य और बड़े-बड़े शब्द, इनका कण्ठस्थ करना मेरे लिए बहुत ही कठिन है।"

"काहेका कठिन है! कुछ नहीं। तुम्हारे आगे पढ़ते-पढ़ते मुझे तो साराका सारा याद हो गया है, 'मेरे जीवनके सर्वोत्तम शुभ-मुहूर्तमें जागरण-समितिने मुझे जो अमरावतीकी मन्दार-मालासे समलंकृत किया है',—मैग्ड! तुम डरो मत। मैं तो तुम्हारे पास ही बैठी रहूँगी, धीरे-धीरे तुम्हें बताती रहूँगी।"

"साहित्यिक भाषा मुझे अच्छी आती नहीं, किन्तु फिर भी मुझे कैसा तो लगता है, मालूम होता है सारीकी सारी लिखावट मेरा मजाक उड़ा रही है। अंग्रेजीमें अगर कहने दो, तो मेरे लिए बड़ा आसान होगा। Dear friends, Allow me to offer you my heartiest thanks for the honour you have conferred upon me on behalf of the Jagarana-Club, the great Awakener इत्यादि,—बस ऐसे दो-चार सेन्टेन्स कह देना ही काफी —"

"नहीं नहीं, सो नहीं होगा,—तुम्हारे मुँहसे बंगला बहुत अच्छी लगेगी। जहाँ यह है-न, 'हे बंग-प्रदेशके तरुण-सम्प्रदाय, हे स्वाधीनता-संचालन-रथके सारथी, हे छिन्नश्रृङ्खल-परिकीर्ण पथके अग्रणीवृन्द',—कुछ भी कहो, अंग्रेजीमें भला ये सब बातें आ सकती हैं! तुम-जैसे विज्ञान-विशारदके मुँहसे जब यह सुनेंगे-न, तो तरुण बंगाल सर्पकी तरह फन उठाकर झूमने लगेगा। अभी काफी समय है,— पढ़ो पढ़ो, मैं भी साथ-साथ पढ़ती हूँ।"

इतनेमें, अपने भारी-भरकम लम्बे शरीरको सीढ़ियोंपरसे आवाजके साथ वहन करते-हुए बैंकके मैनेजर अजेन्द्र हालदार बूट मचामचाते-हुए साहबी

पोशाकमें कमरेमें दाखिल हुए। बोले, "ओह्, अब तो असह्य है, जब भी आता हूँ, तुम्हें नीलापर दखल जमाये बैठा पाता हूँ। काम नहीं, धन्धा नहीं, नीलाको अलग कर रखा है हमलोगोंसे काँटोंके घेरेकी तरह।"

रेवती सङ्कुचित होकर बोला, "आज मुझे एक विशेष काम है, इसीसे-"

"काम तो है ही, इसी भरोसेपर तो आया ही था।—आज तुमने न्योता दिया है सदस्योंको। व्यस्त होगे, यह जानकर ही आज आफिस जानेके पहले आध-घंटेका समय निकालकर जल्दी-जल्दी चला आ रहा हूँ। आते ही सुन रहा हूँ, यहीं ये काममें बँध गये हैं। आश्चर्य है। काम न रहे तो यहीं इनकी छुट्टी है, और काम रहे तो यहीं इनका काम है! ऐसे कभी पीछा-न-छोड़नेवालोंके साथ हम कामवाले कैसे होड़ कर सकते हैं! नीली, is it fair?"

नीलाने कहा, "डॉक्टर भट्टाचार्यमें दोष यह है कि ये असल बातको जोरके साथ नहीं कह सकते। 'काम है इसलिए ये आये हैं', यह फालतू बात है। 'आये बिना रहा नहीं गया' इसलिए आये हैं। यह एक सुनने-लायक बात है और सच है। मेरे सारे समयपर इन्होंने दखल जमा रखा है अपनी जिदके जोरसे। यही तो इनका पौरुष है! तुम-सबोंको यहाँ इस ईस्ट-बंगालीके आगे हार माननी पड़ेगी।"

"अच्छी बात है, तो फिर हमें भी पौरुषका सञ्चालन करना पड़ेगा। अबसे जागरण-क्लबके मेम्बर लोग नारी-हरणकी चर्चा शुरू कर देंगे। जाग उठेगा पौराणिक युग!"

नीलाने कहा, "बड़ा मजा आ रहा है सुननेमें। नारी-हरण पाणि-ग्रहणसे अच्छा है। किन्तु पद्धति कैसी होगी?"

हालदारने कहा, "अभी दिखा सकता हूँ।"

"अभी?"

"हाँ, अभी।"

कहके तुरन्त उसने अपने दोनों हाथोंपर उठा लिया नीलाको सोफेपरसे। नीला चीखती-हँसती-हुई उसके गलेसे लिपट गई।

आप जागरण-क्लबके प्रेसिडेण्ट बने हैं, उसीके सम्मानमें आजका यह भोज है। लाइफ-मेम्बर-शिपके छः सौ रुपये सुविधानुसार पीछे दे देंगे ये।"

"सुविधा शायद अब जल्दी नहीं होगी।"

रेवतीके मनके भीतर स्टीम-रोलर चल रहा था।

सोहिनीने उससे पूछा, "तो अभी तुम्हें उठनेकी सहूलियत नहीं होगी?"

रेवतीने नीलाके मुँहकी तरफ देखा। उसके कुटिल कटाक्षकी मारसे पुरुषका अभिमान जाग उठा। बोला, "कैसे जाऊँ बताइये, निमन्त्रित लोग सब—"

सोहिनीने कहा, "अच्छा, मैं तब तक यहीं बैठी हूँ। सुनो, नसरउल्ला, तुम दरवाजेके पास हाजिर रहो।"

नीलाने कहा, "सो नहीं हो सकता, मा! यहाँ हमारा एक गुप्त परामर्श होगा, यहाँ तुम्हारा रहना उचित नहीं।"

"देख, नीला, चतुराईका पाठ अभी तैने शुरू ही किया है। अभी तू मुझसे आगे नहीं बढ़ सकी है। तुमलोगोंका क्या गुप्त परामर्श है सो क्या मुझे मालूम नहीं? मैं कहे देती हूँ तुमसे, तुमलोगोंके इस परामर्शके लिए मेरा ही रहना यहाँ सबसे ज्यादा जरूरी है।"

नीलाने कहा, "तुमने क्या सुना है, किससे सुना?"

"खबर लेनेकी करामत रहती है बिलके साँपकी तरह रुपयोंकी थैलीमें। यहाँ तुम्हारे तीन-तीन कानूनदाँ मिलकर दस्तावेज उलट-पुलटकर देखना चाहते हैं लेबोरेटरीके फण्डमें कोई छिद्र है या नहीं। क्यों, यही बात है-न, नीलमणि?"

नीलाने कहा, "सो मैं सची बात ही कहूँगी। बापके इतने रुपयोंमें उसकी लड़कीका कोई भी हिस्सा न हो, यह अस्वाभाविक है। इसीसे सब सन्देह करते हैं—"

मोहिनी कुरसीसे उठ खड़ी हुई, बोली, "असल सन्देहकी जड़ और-भी जरा पहलेकी है। कौन तेरा बाप है, और किसकी सम्पत्तिका हिस्सा चाहती है तू? ऐसे आदमीकी लड़की है तू, यह कहनेमें तुझे शरम नहीं आई?"

नीला ऐसे उछली जैसे पाँव-तले साँप पड़ गया हो। बोली, "क्या कह
ी हो, मा!"

"सच कह रही हूँ। उनसे कुछ भी छिपा नहीं था, वे जानते थे सब।
से उन्हें जो मिलना था सो सब मिला है उन्हें, और आज भी मिलेगा।
र-कुछकी उन्होंने परवाह ही नहीं की कभी।"

बैरिस्टर घोषने कहा, "मगर, सिर्फ आपके मुँहकी बातसे तो सब प्रमाणित
हीं हो जायगा?"

"इस बातको वे जानते थे। इसीलिए सब बातोंका खुलासा करके वे
सीयतनामेकी रजिस्टरी करा गये हैं।"

"अरे, भई बाँके, बहुत रात हो गई, अब क्यों,— चलो, उठो।"

पठान सिपाहीका रंग-ढंग देखकर पैंसठके पैंसठो सदस्य नौ-दो-ग्यारह
गये।

इतनेमें, सूटकेस हाथमें लिये-हुए प्रोफेसर चौधरी आ पहुँचे। उन्होंने
हा, "तुम्हारा तार पाकर दौड़ा चला आ रहा हूँ। क्या रे, रेवी, चेहरा
सीमेण्ट जैसा सफेद क्यों पड़ गया? अरे कोई है, बबुआका दूधका कटोरा
ले आ।"

नीलाकी ओर इशारा करके सोहिनीने कहा, "जो कटोरा लायेंगी, वे ये
ी हैं।"

चौधरीने कहा, "ग्वालिनका रोजगार शुरू कर दिया है क्या, बेटी?"

सोहिनी बोली, "नहीं, ग्वाला फाँसनेका रोजगार शुरू किया है, वो बैठा
न शिकार।

"कौन, अपना रेवी क्या?"

"आखिर मेरी लड़कीने ही मेरी 'लैबोरेटरी' बचाई। मैं आदमी नहीं
हचानती, पर मेरी लड़कीने ठीक समझ लिया था कि लैबोरेटरीमें मैंने ग्वाला
ला दिया है। गोबर-कुण्डमें सब डूबने-ही-वाला था, बाल-बाल बच गया।"

अध्यापकने कहा, "बेटी, जब कि तुम्हींने इस जीवका आविष्कार किया
तो इस गोष्ठविहारीका भार भी तुम्हींको लेना होगा। इसके और तो

सब-कुछ है, सिर्फ बुद्धि नहीं है। तुम पास रहोगी तो उसकी कमी इसे मालूम नहीं पड़ेगी। बेवकूफ पुरुषको नाकमें नकेल पहनाकर चलाते रहना बड़ा आसान काम है।"

नीलाने कहा, "क्यों जी, सर आइजक न्युटन, रजिस्ट्री-आफिसमें नोटिस तो दे चुके,—अब वापस लेना चाहते हो क्या?"

छाती फुलाकर रेवतीने कहा, "मर जानेपर भी नहीं।"

"ब्याह होगा ही अशुभ-लग्नमें?"

"हाँ, होगा ही, जरूर होगा।"

सोहिनीने कहा, "किन्तु लैबोरेटरीसे सौ हाथ दूर।"

अध्यापकने कहा, "बेटी नीलू, यह बेवकूफ जरूर है, पर असमर्थ हर्गिज नहीं। इसका नशा कट जाने दो, उसके बाद देखना, खुराकके लिए ज्यादा चिन्ता नहीं रहेगी।"

"सर आइजक, तो फिर तुम्हें कपड़े-लत्ते जरा भद्र-ढंगके बनवाने होंगे। नहीं तो, तुम्हारे सामने मुझे 'घूँघट-वती' होना पड़ेगा!"

इतनेमें, सहसा और-एक छाया आ पड़ी दीवारपर। बुआजी आ खड़ी हुई। बोलीं, "रेवी, घर चल।"

रेवती चुपचाप उठकर बुआजीके पीछे-पीछे चल दिया, पीछे मुड़कर देखा तक नहीं उसने एक बार।

बंगला-रचना : आश्विन १३९७
हिन्दी-अनुवाद : श्रावण २००८

Surana Printing Works, Calcutta.